इस्लाम
दयालुतापूर्ण ईश्वरीय धर्म

लेखक
डॉ० फ़रहत हुसैन

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

"अल्लाह दयावान् कृपाशील के नाम से"

दो शब्द

इस पुस्तक ('इस्लाम : दयालुतापूर्ण ईश्वरीय धर्म') में क़ुरआन और हदीस की रोशनी में बहुत ही सरल भाषा में इस्लाम की नैतिक शिक्षाएँ प्रस्तुत की गई हैं और स्पष्ट किया गया है कि अल्लाह का भेजा हुआ यह धर्म दया, करुणा और सद्व्यवहार के मामले में भी अपना अद्वितीय उदाहरण रखता है। पुस्तक के प्रारम्भ में बताया गया है कि एक परिवार में पति-पत्नी, माँ-बाप, औलाद और दूसरे रिश्तेदारों के क्या अधिकार हैं और उनके साथ किस प्रकार बर्ताव व व्यवहार करने की ताकीद की गई है। अगले अध्याय में समाज के दूसरे वर्गों, सेवकों, अनाथों, पड़ोसियों इत्यादि से सम्बन्धित इस्लामी शिक्षाएँ प्रस्तुत की गई हैं। यह भी बताया गया है कि दूसरे धर्मों के माननेवालों के साथ भी इस्लाम ने यह आदेश दिया है कि उनके मानवाधिकारों की रक्षा की जाए और उनके साथ सद्व्यवहार किया जाए।

इस्लाम का स्पष्ट आदेश यह है कि इनसानों के साथ भेदभाव न किया जाए, और अगर किसी पर ज़ुल्म व अत्याचार हो रहा हो तो इसको समाप्त करने के उपाय भी बताए गए हैं। यही नहीं, इस्लाम में तो जानवरों के साथ भी रहम एवं दया करने पर उभारा गया है। अन्त में इस्लाम की मूल आस्था और इबादतों का भी संक्षिप्त परिचय करा दिया गया है।

आशा है कि इस पुस्तक के द्वारा पाठकों को इस्लाम की वास्तविक शिक्षाओं की जानकारी प्राप्त होगी और उनकी बहुत-सी ग़लतफ़हमियाँ व भ्रान्तियाँ दूर होंगी, जो इस्लाम के बारे में फैली हैं और फैलाई जा रही हैं।

इस पुस्तक में प्रूफ़ आदि की कोई ग़लती न रहे इसका भरपूर प्रयास किया गया है, फिर भी पाठकों को कोई ग़लती नज़र आए तो वे हमें अवश्य सूचित करें। हम आपके आभारी होंगे।

—शोब-ए-दावत

जमाअत इस्लामी हिन्द

अध्याय-1

विषय प्रवेश

इस्लाम एक ऐसा धर्म है जो दया-भाव, प्रेम, भाईचारे और हमदर्दी का पूर्ण सन्तुलन और मानव स्वभाव के अनुरूप उच्चतम आदर्श प्रस्तुत करता है। इस्लाम मानवीय गुणों को पूर्ण विस्तार से पवित्र क़ुरआन और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के कथनों व भाषणों के संकलन द्वारा प्रस्तुत करता है जिसे हम सैद्धान्तिक पक्ष (Theory) कह सकते हैं, फिर इन सिद्धान्तों तथा नियमों को स्वयं ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) तथा उनके उत्तराधिकारियों एवं अनुयायियों द्वारा इसी भू-भाग पर अक्षरशः लागू करके दिखाया गया है जिसका विवरण इतिहास में प्रामाणिकता के साथ दर्ज है। मानव जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में दया-भाव सम्बन्धी शिक्षाओं के वर्णन से पूर्व हम उन चार बिन्दुओं पर चर्चा करेंगे जो इस्लाम के दयालुतापूर्ण ईश्वरीय धर्म होने का ठोस आधार प्रस्तुत करते हैं–

1. 'इस्लाम' का अर्थ है अमन, शान्ति और सलामती।

2. ईश्वर का सबसे बड़ा गुण है रहमान और रहीम अर्थात् अत्यधिक दयावान और अत्यन्त कृपाशील।

3. अन्तिम ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को 'रहमते-आलम' अर्थात् सम्पूर्ण जगत् के लिए दयालु बनाकर भेजा गया।

4. मानवजाति के पथ-प्रदर्शन हेतु जो ईशवाणी अर्थात् पवित्र क़ुरआन अवतरित किया गया उसकी विशेषता भी मार्गदर्शक और रहमत (दयालुता) है।

स्पष्ट है कि यह ईश्वरीय धर्म दयालुता और कृपाशीलता से परिपूर्ण है। इन चारों बिन्दुओं की संक्षिप्त व्याख्या प्रस्तुत है–

1. इस्लाम

इस्लाम शब्द का एक अर्थ है अमन, शान्ति और सलामती तथा दूसरा अर्थ है आज्ञापालन, अनुसरण और समर्पण। अतः इस्लाम जीवन व्यतीत करने की वह पद्धति है, जिसमें मनुष्य अपने प्रभु के प्रति पूर्णरूप से समर्पित होकर

अमन व सलामती प्राप्त करता है। वह इस संसार में मानसिक सन्तुष्टि के साथ-साथ शान्तिपूर्ण जीवन भी व्यतीत करता है तथा पारलौकिक जीवन में परम सुख प्राप्त करता है। आगे की चर्चा में हम यह स्पष्ट करने की चेष्टा करेंगे कि इस्लाम के व्यावहारिक सिद्धान्तों द्वारा परिवार और समाज में अनुकूल वातावरण उत्पन्न होता है, जहाँ आपसी हमदर्दी, सहानुभूति, भाईचारा और सहयोग पाया जाता है। लेन-देन और खाने-कमाने की क्रियाओं में धोखा, झूठ, हेराफेरी और बेईमानी नहीं होती। राजनीति तथा शासन-प्रशासन निष्पक्ष, अत्याचार मुक्त तथा अनुशासित होता है। क़ानून द्वारा शीघ्र एवं निष्पक्ष न्याय प्रदान किया जाता है। सम्पूर्ण व्यवस्था दयाभाव, कृपाशीलता, करुणा, सहानुभूति तथा भाईचारे की भावना से ओत-प्रोत होती है। यदि कहीं कठोरता होती है तो उसका उद्देश्य भी शान्ति-स्थापना होता है।

2. प्रभु कृपाशील, दयावान

प्रसिद्ध फ़्रान्सीसी वैज्ञानिक मौरिस बुकैले के अनुसार, "इस सृष्टि का एक-एक कण (Atom) हमें एक कृपाशील, दयालु एवं सर्वशक्तिमान रचयिता का बोध कराता है।"

इसमें सन्देह नहीं कि उसके अनेक गुणवाचक नाम हैं, परन्तु पवित्र क़ुरआन में सबसे अधिक प्रयुक्त होनेवाले गुण हैं—रहमान व रहीम, जो एक ही धातु 'रहम' से बने हैं—बड़ा मेहरबान, बहुत रहम करनेवाला अर्थात् अत्यन्त कृपाशील, अत्यधिक दयावान्। क़ुरआन का प्रत्येक अध्याय जिस वाक्य से आरम्भ होता है वह है 'बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम' (अल्लाह कृपाशील और दयावान के नाम से)। यह वाक्य क़ुरआन में 114 बार आया है। इसके अतिरिक्त सैकड़ों स्थानों पर कृपाशील, दयावान, क्षमा करनेवाला, सलामती देनेवाला, संरक्षक बताया गया है। ईश्वर सर्वशक्तिमान है और न्यायप्रिय भी है, इसलिए अत्याचारी और घमण्डी उसकी सज़ा से बच नहीं सकते, मगर उसका दयाभाव सर्वोपरि है। क़ुरआन के कुछ महत्वपूर्ण उद्धरण प्रस्तुत हैं—

> "सज़ा तो मैं (अल्लाह) जिसे चाहता हूँ देता हूँ, मगर मेरी दयालुता हर चीज़ पर छाई हुई है।" (क़ुरआन, 7:156)

> "उसने (अल्लाह ने) दयालुता की नीति अपने ऊपर अनिवार्य कर ली है।" (क़ुरआन, 6:12)

"तुम्हारे रब ने दयालुता को अपने ऊपर अनिवार्य कर लिया है। (यह उसकी दया ही है कि) अगर तुममें से कोई नादानी के साथ कोई बुराई कर बैठा हो फिर उसके बाद तौबा करे और सुधार कर ले तो वह उसे माफ़ कर देता है और नरमी से काम लेता है।"

(क़ुरआन, 6:54)

अपराध बोध से ग्रसित निराशजनों को तसल्ली दी गई—

"कह दो! ऐ मेरे बन्दो, जिन्होंने अपने आपपर ज़्यादती कर ली है, अल्लाह की रहमत (दयाभाव) से निराश न हो जाना। निस्सन्देह अल्लाह सभी गुनाहों को माफ़ कर देता है। वह निश्चय ही बड़ा क्षमाशील एवं अत्यन्त दयावान है।" (क़ुरआन, 39:53)

हम इनसान, ईश्वर की रचना हैं। वह अपने बन्दों से बहुत प्रेम करता है, इसलिए धरती पर बसनेवालों को 'अल्लाह का कुटुम्ब' कहा गया। समस्त प्राणियों तथा इनसानों के मन में जो प्रेम-भाव, दया-भाव और वात्सल्य पाया जाता है वह ईश्वर के प्रेम-भाव की एक सूक्ष्म झलक है। ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के कथन से यह बात स्पष्ट हो जाती है—

"अल्लाह ने अपने रहम (दयाभाव) के सौ (100) भाग किए, उसमें से निन्नानवे (99) को अपने पास रखा और एक भाग को धरती पर भेजा। इस एक भाग (अर्थात् एक प्रतिशत) का प्रभाव है कि सृष्टि के जीव एक-दूसरे पर दया करते हैं, यहाँ तक कि घोड़ी अपने बच्चे को खुर से (चोटिल होने से) बचाने के लिए उसको उठा लेती है।"

(हदीस : बुख़ारी)

धरती पर भेजे गए एक प्रतिशत का प्रभाव हम दिन-रात देखते हैं। माँ अपने बच्चे के लिए कितनी मेहरबान है। उसके लिए हर प्रकार का कष्ट सहती है। कष्ट उठाकर जनती है, अपने सीने से दूध पिलाती है, उसका मल-मूत्र साफ़ करती है। जाड़ों की रात में जब वह बिस्तर गीला कर लेता है तो बच्चे को सूखे में सुलाती है चाहे उसे स्वयं को गीले में लेटना पड़े। पशु-पक्षियों में भी यह भावना विद्यमान है। यह एक प्रतिशत का प्रभाव है। अनुमान लगाइए कि इससे 99 गुना दया, स्नेह, प्रेम और कृपा कितनी विशाल होगी, जो हमारा पालनहार हर क्षण हमपर उन्डेल रहा है। फिर इसपर भी

विचार करना चाहिए कि इस भव्य कृपाशीलता की शुक्रगुज़ारी और कृतज्ञता हम अपने पालनहार के प्रति कितनी कर रहे हैं? हम उसके प्रति कितने समर्पित हैं?

3. महा ईशदूत रहमते-आलम

महा ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ईश्वर के अन्तिम सन्देशवाहक हैं। ईश्वर की अपने बन्दों पर असीम कृपा है कि उसने हर युग में हर समुदाय के लिए पथ-प्रदर्शक नियुक्त किए, जो अपने-अपने कार्य-क्षेत्र एवं कार्य-अवधि में अपना कर्तव्य निभाते रहे। जब सभ्यता उन्नति करके वैश्विक दौर में पहुँची तो ईश्वर ने अपने अन्तिम सन्देशवाहक को विश्वस्तरीय प्रकाशना (दिव्य क़ुरआन) देकर समस्त मानवजाति के लिए नियुक्त किया और आपको रहमते-आलम (सम्पूर्ण जगत् के लिए दयालुता) की उपाधि प्रदान की।

'वमा अरसलना-क इल्ला रहमतल्लिल आ-ल-मीन'

(क़ुरआन, 21:107)

अनुवाद : हमने आपको (अर्थात् हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ को) सम्पूर्ण जगत् के लिए सर्वथा दयालुता (रहमत) बनाकर भेजा है।

महा ईशदूत को परिस्थितिवश युद्ध भी करना पड़ा तथा न्याय-स्थापना एवं क़ानून व्यवस्था हेतु अपराधियों को दण्ड भी दिया, परन्तु आपके व्यक्तित्व का उभरा हुआ पक्ष दयालुता, क्षमादान, कृपा दृष्टि, स्नेह और सौहार्द से परिपूर्ण है, जिसे अपने ही नहीं विरोधी भी स्वीकार करते हैं। महा ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) कमज़ोरों, बच्चों, महिलाओं, बूढ़ों और दास-दासियों के सहायक थे, अपनी पत्नियों, सन्तान और रिश्तेदारों के साथ प्रेम और स्नेह का व्यवहार करते थे, विरोधियों और शत्रुओं के लिए क्षमादाता थे, पशु-पक्षियों, पेड़-पौधों और अन्न-जल के प्रति दयाभाव रखते थे।

मक्का नगर में मुहम्मद (सल्ल॰) को और उनके अनुयायियों को मक्कावासियों के हाथों भयंकर कष्ट उठाने पड़े, यहाँ तक कि उनको और उनके परिवारवालों को तीन वर्ष की नज़रबन्दी झेलनी पड़ी परन्तु वे स्वयं सब कुछ सहन करते रहे और अपने साथियों को धैर्य धारण करने की नसीहत करते रहे मगर कभी बद्दुआ या श्राप नहीं दिया, क्योंकि वे रहमते-आलम (संसार के लिए

करुणानिधि) हैं। हाँ कभी दुआ की आवश्यकता पड़ी तो पीछे नहीं हटे। हुआ यह कि उन्हीं दिनों मक्का और उसके आसपास के क्षेत्र में भयंकर सूखा पड़ गया। विरोधी परेशान होकर पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) की सेवा में पहुँचे और विपत्ति दूर करने के लिए ईश्वर से दुआ करने का अनुरोध किया। मामला सर्वसाधारण की कठिनाई दूर करने का था। आप (सल्ल॰) ने ईश्वर के समक्ष प्रार्थना की, जो तुरन्त स्वीकार कर ली गई और मक्कावासियों की मुसीबत दूर हो गई।

ताइफ़ की घटना तो चकित कर देने वाली है। मक्का नगर की कुछ दूरी पर एक सुन्दर पहाड़ी बस्ती 'ताइफ़' है। अल्लाह के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने वहाँ जाकर इस्लाम का सन्देश उनके सामने रखा तो उन्होंने कड़ा विरोध किया। जब पैग़म्बर (सल्ल॰) वहाँ से निराश लौट रहे थे तो उन्होंने आपको पत्थर मारे, जिससे आप चोटिल हो गए और आपके जूते ख़ून से भर गए। यह बड़ा हृदयविदारक दृश्य था। आप जैसे-तैसे एक बाग़ में पहुँच गए। ईश्वर की ओर से एक फ़रिश्ता आया और उसने कहा कि आप अनुमति दें तो ताइफ़ की इन दोनों पहाड़ियों के बीच मैं उन्हें कुचल कर समाप्त कर दूँ। पैग़म्बर (सल्ल॰) ने तुरन्त उत्तर दिया नहीं-नहीं, सम्भव है कि उनकी भावी पीढ़ी सन्मार्ग का अनुसरण करे। घायलावस्था में भी आपका यह आचरण! क्योंकि आप रहमते-आलम हैं।

दयालुता और क्षमाशीलता का जो उदाहरण मक्का विजय के समय दुनिया ने देखा वह आश्चर्य में डाल देता है। इस विजय में न लड़ाई है, न रक्तपात और न विजयी फ़ौज में बड़ाई और घमण्ड। गत दो दशकों से शत्रुता बरतने-वाले, मुसलमानों से युद्ध करनेवाले और ईशदूत की हत्या का षड्यन्त्र रचनेवाले आज बेबस खड़े हैं। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) को उनपर पूर्ण आधिपत्य प्राप्त है। वे दण्ड के अधिकारी भी हैं और स्वयं अपराधबोध का शिकार भी हैं कि हमने अपने अहंकार से वशीभूत होकर अकारण हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) और उनके सत्य सन्देश का विरोध किया। यदि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) उन्हें सज़ा देते तो किसी भी रूप में आपके कृत्य को ग़लत नहीं ठहराया जा सकता था। मगर आपकी घोषणा थी—"जाओ आज तुम सबको क्षमादान दिया गया, तुम सब मुक्त किए जाते हो।" इस आम माफ़ी में वह महिला भी थी, जिसने आपके चहेते चाचा हज़रत हमज़ा (रज़ि॰) को

शहीद कराकर उनका कलेजा चबाया था। यह थी दयालुता की पराकाष्ठा और इस्लाम इस व्यवहार से फैला। यही लोग आपके अनुयायी बनकर उस मिशन के वाहक बने।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के दयाभाव और क्षमादान की घटनाओं से इतिहास के पन्ने भरे पड़े हैं, जिसे आपके विरोधी तक स्वीकार करते हैं। इस्लाम की स्वाभाविक सरल, सहज शिक्षाओं तथा ईशदूत के उत्कृष्ट दयाभाव तथा स्नेहपूर्ण आचरण के कारण ही लोग इस सन्देश की ओर खिंच आए। दिल तो दिल से जीता जाता है, तलवार से नहीं। तलवार तो आत्मरक्षा या उन हठधर्मियों के लिए होती है जो शराफ़त को कमज़ोरी समझते हैं। आशय यह है कि इस्लाम के अन्तिम ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का सम्पूर्ण जीवन उनकी शिक्षाएँ, उनका मिशन मानवहित, दयाभाव और हमदर्दी का उत्कृष्ट नमूना है।

4. पवित्र क़ुरआन—मार्गदर्शन भी और रहमत भी

अब चौथी चीज़ क़ुरआन को लीजिए। मनुष्य से ईश्वर के अपार प्रेम और उसकी असीम दयालुता का ही परिणाम है कि उसने मानवजाति के मार्गदर्शन की समुचित व्यवस्था की। समय-समय पर अपने सन्देश और सन्देशवाहक धरती पर भेजता रहा। अन्तिम ईशवाणी 'क़ुरआन' अन्तिम संदेशवाहक हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) पर अवतरित की गई। क़ुरआन को पढ़ने से सहज ही स्पष्ट हो जाता है कि यह मानवजाति के लिए रहमत, दयालुता और ईश्वरीय अनुकम्पा है।

इस आशय के क़ुरआन के कुछ अंश प्रस्तुत हैं—

"ऐ लोगो! तुम्हारे पास तुम्हारे रब की ओर से एक उपदेश आ चुका है जो मन के रोगों के लिए उपचार है तथा आस्थावानों के लिए मार्गदर्शन और दयालुता है।" (क़ुरआन, 10:57)

"हम क़ुरआन में जो कुछ अवतरित करते हैं वह आस्थावानों के लिए शिफ़ा (रोग-मुक्ति) तथा रहमत (दयालुता) है। परन्तु वह अत्याचारियों के घाटे ही में वृद्धि ही करता है।" (क़ुरआन, 17:82)

"अब तुम्हारे पास तुम्हारे रब की ओर से एक स्पष्ट प्रमाण, मार्गदर्शन और दयालुता आ चुकी है।" (क़ुरआन, 6:157)

"और निश्चय ही हम उनके पास एक ऐसी किताब ले आए हैं जिसे हमने ज्ञान के आधार पर विस्तृत कर दिया है जो ईमान लानेवालों के लिए मार्गदर्शन और दयालुता है।" (क़ुरआन, 7:52)

"हमने तुमपर ग्रन्थ अवतरित किया हर चीज़ का स्पष्ट उल्लेख करने के लिए तथा आज्ञाकारियों के मार्गदर्शन, दयालुता और शुभ सूचना के रूप में।" (क़ुरआन, 16:89)

क़ुरआन की शिक्षाएँ भी दयाभाव से परिपूर्ण हैं। देखिए ईश्वर के निकट होने में कितना प्रेम-भाव है—

"और जब तुमसे मेरे बन्दे मेरे बारे में पूछें, तो मैं तो निकट ही हूँ, पुकारनेवाले की पुकार का उत्तर देता हूँ जब वह मुझे पुकारता है।" (क़ुरआन, 2:186)

अपराध बोध से ग्रस्त दुखी मन को क़ुरआन का यह सन्देश कि "अल्लाह की रहमत से मायूस न हो जाओ" (क़ुरआन, 39:53) कितना बड़ा सहारा है।

रहमत और दयालुता यही है कि क़ुरआन में मनुष्य के लाभ और कल्याण की शिक्षाएँ हैं। इनसान को जहाँ घाटा हो सकता है उससे सचेत कर दिया गया है। उसकी मिसाल ऐसी है कि आप अन्धेरे में खड़े हैं, कुछ भी नहीं देख पा रहे हैं, ऐसे में टार्च के प्रकाश में आपके सामने का सब कुछ चमक उठे—

"जो लोग ईमान लाते हैं अल्लाह उनका रक्षक और सहायक है जो उन्हें अन्धकार से निकालकर प्रकाश में लाता है।"

(क़ुरआन, 2:257)

उपरोक्त प्रारम्भिक चर्चा से स्पष्ट है कि इस्लाम में ईश्वरीय गुणों, हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के आचरण तथा क़ुरआनी शिक्षाओं में दयाभाव का पहलू बहुत उभरा हुआ है और निस्सन्देह इस्लाम दयालुतापूर्ण ईश्वरीय धर्म है। इस तथ्य की पुष्टि के लिए हम इस्लाम के व्यावहारिक पक्ष पर दृष्टि डालेंगे और यह जानने का प्रयास करेंगे कि पारिवारिक सम्बन्धों, सामाजिक गतिविधियों, शासन-प्रशासन के कार्यों, आर्थिक क्रियाकलापों तथा धार्मिक या आध्यात्मिक पहलुओं में दयाभाव और कृपाशीलता की स्थिति क्या है?

अध्याय-2

इस्लामी परिवार : दयाभाव और प्रेम का ख़ज़ाना

व्यक्ति से परिवार, परिवार से समाज और समाज से राष्ट्र का निर्माण होता है। इस शृंखला की सबसे महत्वपूर्ण कड़ी या इकाई है 'परिवार'। पारिवारिक व्यवस्था जितनी सुदृढ़ और गुणवान होगी, समाज और राष्ट्र उतने ही सभ्य एवं शक्तिशाली होंगे। इसलिए इस्लाम व्यक्ति एवं परिवार को मानवीय गुणों तथा नैतिक सिद्धान्तों के आधार पर शिखर तक पहुंचाने का प्रबन्ध करता है। सुखद दाम्पत्य जीवन, संस्कारी सन्तान जो माता-पिता के योगदान को पहचाने, ज़िम्मेदार माता-पिता जो औलाद का दयाभाव व प्रेम के साथ पालन-पोषण करे, परिवार के सदस्य एक-दूसरे के शुभचिन्तक और हमदर्द हों तथा समाज और देश के लिए उचित योगदान देते हुए लोक और परलोक में कल्याण के भागीदार बनें।

पति-पत्नी

परिवार स्त्री-पुरुष के वैध सम्बन्धों से बनता है, इसे क़ुरआन में ईश्वर की निशानी बताया गया है—

> "और उसकी निशानियों में से एक यह है कि उसने तुम्हारे लिए खुद तुम्हीं में से जोड़े बनाए हैं, ताकि तुम उनके पास सुकून पाओ, और उसने तुम्हारे बीच प्रेम-भाव तथा दयालुता पैदा की।"
>
> (क़ुरआन, 30:21)

दाम्पत्य-जीवन से परिवार रूपी संस्था अस्तित्व में आती है जिससे तीन लाभ प्राप्त होते हैं, प्रथम पति और पत्नी दोनों सुख-शान्ति प्राप्त करते हैं, दूसरे उनके बीच प्रेम और मुहब्बत पैदा होती है तथा तीसरे रहमत, दयालुता तथा कृपाशीलता का वातावरण बनता है।

वासनात्मक लगाव तो, हर जीवधारी में नस्ल की बढ़ोत्तरी के लिए

प्रकृतिप्रदत्त है, मगर अल्लाह ने मनुष्यों के स्वभाव में ही पारिवारिक आवश्यकता रख दी है। वह इस तरह कि स्त्री-पुरुष एक-दूसरे के प्रति जो लगाव और आकर्षण रखते हैं वह सदैव बना रहता है, इसलिए वे एक साथ घर बनाकर रहना पसन्द करते हैं। फिर इनसानी बच्चे को अन्य जीवधारियों के बच्चे की तुलना में अधिक समय तक देख-रेख और पालन-पोषण की आवश्यकता होती है, जिसके लिए ईश्वर ने बच्चे के प्रति स्नेह रख दिया है जो सबसे अधिक माँ के मन में होता है, फिर पिता तथा उसके अन्य सम्बन्धियों यहाँ तक कि अपरिचित लोगों के मन में भी बच्चे के प्रति लगाव रखा गया। परिवार की इस इकाई को दयाभाव और प्रेम-भाव के उच्च स्तर पर बनाए रखने के लिए इस्लाम ने पति-पत्नी दोनों को महत्वपूर्ण दिशा-निर्देश दिए जिनका सार प्रस्तुत है–

- स्त्री-पुरुष के रिश्ते विधिवत विवाह से स्थापित हों–

"उन (विवाहिता) औरतों के अतिरिक्त जो औरतें हैं, तुम्हारे लिए वैध किया गया कि महर (विवाह धन) के बदले विधिवत सम्बन्ध स्थापित करो, न कि अवैध सम्बन्ध बनाओ।" (क़ुरआन, 4:24)

ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने फ़रमाया–

"तुमको विवाह करना चाहिए, वह बदनिगाही से रोकने तथा कामेच्छा पर नियन्त्रण रखने की सर्वोत्तम रीति है।" (हदीस : बुख़ारी)

- अवैध सम्बन्धों से क्षणिक आनन्द तो प्राप्त हो सकता है, मगर यह समाज के लिए अत्यन्त हानिप्रद तथा घातक है। इसलिए इस्लाम इसे अस्वीकार करता है और साथ ही कड़ी सज़ा का प्रावधान भी करता है–

"व्यभिचार के निकट भी न जाओ क्योंकि यह अश्लीलता है, और बुरा रास्ता है।" (क़ुरआन, 17:32)

पति-पत्नी के बीच कभी पसन्द-नापसन्द में अन्तर हो सकता है। इसका हल बताया गया–

"उनके (अपने दम्पति के) साथ भले तरीक़े से रहो-सहो। अगर वे तुम्हें पसन्द न हों तो सम्भव है कि एक चीज़ तुम्हें पसन्द न हो और अल्लाह ने उसमें बहुत कुछ भलाई रख दी हो।" (क़ुरआन, 4:19)

● पति-पत्नी के रिश्ते को अलंकारिक भाषा में व्यक्त किया गया–

"वे तुम्हारे लिए वस्त्र (लिबास) हैं और तुम उनके लिए वस्त्र हो।"

(क़ुरआन, 2:187)

यहाँ पति-पत्नी को वस्त्र की उपमा दी गई है। वस्त्र इनसान के शरीर से लिपटा रहता है और सुन्दरता में वृद्धि के साथ-साथ मौसम के दुष्प्रभाव से बचाता भी है। यही तीनों लाभ दाम्पत्य जीवन में बँध जाने के बाद पति-पत्नी को प्राप्त होते हैं। उनके दिल आपस में जुड़े होते हैं, वे एक-दूसरे के लिए शोभा होते हैं। चारित्रिक बिगाड़ के वातावरण के दुष्प्रभाव से दोनों सुरक्षित रहते हैं।

पति को निर्देशित किया गया कि–

1. दाम्पत्य जीवन भले तरीक़े से व्यतीत करो। (क़ुरआन, 4:19)

2. पत्नियों के महर (विवाह धन) प्रसन्न्तापूर्वक अदा करो। (क़ुरआन, 4:4)

3. ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने फ़रमाया–

"पत्नियों से अच्छा व्यवहार करो, औरत पसली से पैदा की गई है जो टेढ़ी होती है, उसे सीधा करोगे तो टूट जाएगी।" (हदीस : बुख़ारी)

4. अपना धन अपने परिवारवालों पर ख़र्च करने को प्रोत्साहित किया गया। ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने फ़रमाया, "जो माल अपने घरवालों पर ख़र्च किया जाए, उसपर ईश्वर सबसे अधिक पुण्य देता है।"

5. पत्नी और बच्चों में अच्छे संस्कार हों इसके लिए शिक्षा-दीक्षा पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है–

"ऐ ईमानवालो! अपने आपको और अपने घरवालों को (नरक की) आग से बचाओ।" (क़ुरआन, 66:6)

"और अपने घरवालों को नमाज़ का आदेश करो और स्वयं भी उसपर जमे रहो।" (क़ुरआन, 20:132)

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने फ़रमाया–

"मर्द अपने घरवालों का ज़िम्मेदार है, उसे अल्लाह के यहाँ जवाबदेही करनी होगी।"

पत्नी के लिए ध्यान देने योग्य बातें–

1. पति का ख़याल रखो उसकी अकारण अवज्ञा न करो।
2. हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने हिदायत की कि औरतों को चाहिए कि वे किसी ऐसे व्यक्ति को घर में प्रवेश न करने दें, जिसे पति नापसन्द करता हो।
3. अपने चरित्र की रक्षा करो। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने फ़रमाया, "जो औरत नमाज़ पढ़े और अपनी आबरू की रक्षा करे और अपने पति का कहा माने वह स्वर्ग में किसी भी द्वार से प्रवेश कर सकती है।"
4. पति अपनी आवश्यकतावश बुलाए तो अकारण इनकार न करना चाहिए।
5. हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने फ़रमाया, "नेक पत्नी ईश्वर का आर्शीष है कि जब पति उससे किसी काम को कहे तो प्रसन्नतापूर्वक करे, जब उसे देखे तो खुश कर दे, जब बाहर हो तो अपनी इज़्ज़त और पति के माल की निगरानी करे।" (हदीस : इब्ने-माजा)

इन शिक्षाओं और निर्देशों का पालन करने पर हमारे घर जन्नत का नमूना और दयाभाव का असीम भण्डार साबित हो सकते हैं।

माता-पिता

ईश्वर के बाद यदि किसी का उपकार हमारे ऊपर है तो वे हैं हमारे माँ-बाप। जिन्हें खुदा ने प्रेम, त्याग, करुणा और दया की मूर्ति बनाया है। इनसान अपने माँ-बाप के ऋण से कभी मुक्त नहीं हो सकता। इस तथ्य को पवित्र क़ुरआन में बहुत ही सुन्दर ढंग से समझाया गया है–

> "तुम्हारे रब ने फ़ैसला कर दिया है कि उसके सिवा किसी की बन्दगी न करो और माँ-बाप के साथ अच्छा व्यवहार करो। यदि उनमें से कोई एक या दोनों तुम्हारे सामने बुढ़ापे को पहुँच जाएँ तो उन्हें 'उफ़' तक न कहो, न उन्हें झिड़को, बल्कि उनसे शिष्टाचारपूर्वक बात करो और उनके आगे नम्रता और दयालुता से बिछे रहो और कहो–'मेरे रब! जिस प्रकार उन्होंने बाल्यकाल में मुझे स्नेह दिया था तू भी उनपर दया कर।" (क़ुरआन, 17:23-24)

क़ुरआन के इस अंश में ईश्वर में विश्वास, उसके प्रति कृतज्ञता और केवल उसी की दासता स्वीकार करने के आदेश के बाद विस्तार से बूढ़े माता-पिता

के बारे में निर्देश दिए गए हैं। वर्तमान में बूढ़े माता-पिता को महत्व न देने और उन्हें 'ओल्ड एज होम' में पहुँचा देने की पृष्ठभूमि में उपरोक्त आदेश की सार्थकता सरलता से समझी जा सकती है।

माता-पिता पर अपना धन ख़र्च करने पर उभारा गया तथा उसे नेकी का कार्य बताया गया जिसपर अच्छा बदला मिलेगा। एक बार हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) से एक व्यक्ति ने अपने बाप की शिकायत की कि जब चाहते हैं मेरा माल ले लेते हैं। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने उसके बाप को बुलवा भेजा। लाठी टेकता हुआ एक बूढ़ा कमज़ोर आदमी उपस्थित हुआ। पूछने पर वह बोला—"ऐ अल्लाह के रसूल! एक समय था जब यह (मेरा बेटा) कमज़ोर और बेबस था और मुझमें शक्ति थी। मैं मालदार था और यह ख़ाली हाथ था। मैंने कभी इसको अपनी चीज़ लेने से नहीं रोका। आज मैं कमज़ोर हूँ और यह शक्तिशाली है, मैं ख़ाली हाथ हूँ और यह मालदार है। अब यह अपना माल मुझसे बचा-बचाकर रखता है।" बूढ़े का यह बयान सुनकर ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की आँखों में आँसू आ गए और बूढ़े के लड़के को सम्बोधित करके कहा—"तू और तेरा माल तेरे बाप का है।"

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के एक कथन के अनुसार माँ-बाप की ओर प्रेम भाव से देखना भी इबादत है—

> "जो नेक सन्तान भी अपने माता-पिता पर मुहब्बत भरी एक दृष्टि डालती है, उसके बदले में ईश्वर उसको एक हज का पुण्य प्रदान कर देता है।" (हदीस : मुस्लिम)

माँ

माता-पिता की भूमिका का तुलनात्मक अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि माँ का योगदान अधिक है। इस तथ्य को क़ुरआन बड़े सशक्त ढंग से प्रस्तुत करता है—

> "और हमने इनसान को उसके माता-पिता के बारे में ताकीद की है। उसकी माँ ने कष्ट पर कष्ट उठाकर उसे गर्भ में रखा और दूध छूटने में दो वर्ष लगे। तुम मेरा (अल्लाह का) एहसान मानो और अपने माता-पिता का भी एहसान मानो।" (क़ुरआन, 31:14)

स्पष्ट है अल्लाह का कृतज्ञ होना ही चाहिए जिसने माता-पिता के मन में ममत्व का भाव कूट-कूटकर भर दिया। पिता सन्तान के लालन-पालन के लिए धनोपार्जन में परिश्रम करता है, उनके भविष्य की चिन्ता करता है तो दूसरी ओर माँ बच्चों पर अपना सब कुछ न्योछावर कर देती है। जन्म देने की तकलीफ़ सहती है, दूध पिलाती है और हर प्रकार की सेवा करती है, इसलिए हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने माँ की सेवा को प्राथमिकता दी है।

> "एक व्यक्ति ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) से पूछा कि मेरे अच्छे बर्ताव का सबसे अधिक हक़दार कौन है? आप (सल्ल॰) ने उत्तर दिया, "तुम्हारी माँ।" उसने कहा फिर? आपने कहा, "तुम्हारी माँ।" उसने पूछा उसके बाद कौन? आपने कहा, "तुम्हारी माँ।" जब उस व्यक्ति ने चौथी बार भी यही प्रश्न किया तो आपने उत्तर में कहा, "तुम्हारे पिता।" (हदीस : बुख़ारी)

अर्थात् सेवा और अच्छे व्यवहार के अधिकार के मामले में माता का हिस्सा 75 प्रतिशत तथा पिता का 25 प्रतिशत है।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के एक अन्य कथन के अनुसार–

"जन्नत माँ के पैरों तले है।" अर्थात् माँ की सेवा करके स्वर्ग प्राप्त किया जा सकता है।

सन्तान

परिवार के तीसरे महत्वपूर्ण अंग को लीजिए जो ईश्वर का बहुमूल्य उपहार है। बच्चे की किलकारी माता-पिता के ही नहीं अन्य लोगों के दिल को भी गुदगुदाती है। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने बच्चों को 'स्वर्ग के पुष्प' की संज्ञा दी। सन्तान के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण इस्लामी शिक्षाएँ संक्षेप में प्रस्तुत हैं–

1. सुरक्षा

> "अपनी सन्तान को ग़रीबी के डर से मार न डालो, हम उन्हें भी और तुम्हें भी जीविका प्रदान करते हैं।" (क़ुरआन, 17:31)

ध्यान रहे कि उपरोक्त आदेश की परिधि में भ्रूण-हत्या भी आती है।

2. स्वयं अच्छा नमूना बनें और बच्चों में भी अच्छे संस्कार डाले जाएँ,

(क़ुरआन, 66:6)। उन्हें ईश-भक्ति (नमाज़) का आदेश दिया जाए, (क़ुरआन, 20:132)।

3. इस्लामी शिक्षा यह है कि बच्चों से मुहब्बत से पेश आओ। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) बच्चों से बहुत प्यार करते थे। बच्चों को गोद में उठाकर चूमते थे। जो बच्चे सम्पर्क में रहते उनको अच्छी बातें सिखाते थे। बच्चों की बचकानी हरकतों पर कभी ग़ुस्सा न करते। आपके नाती हज़रत हसन (रज़ि॰) और हज़रत हुसैन (रज़ि॰) नमाज़ पढ़ने के बीच भी आपकी पीठ पर चढ़ जाते थे। आजकल घर के लोगों के पास बच्चों के लिए समय नहीं है, इसलिए वे अवसाद का शिकार हो जाते हैं।
4. बच्चों को बुरी संगत में कभी बैठने न दिया जाए। हदीस में इसको एक सुन्दर उदाहरण से इस प्रकार समझाया गया है—

   "अच्छे और बुरे दोस्त का उदाहरण ऐसा ही है जैसे इत्र (सुगंध) बेचनेवाला और भट्टी फूँकनेवाला लुहार। इत्रवाले से इत्र न भी लोगे तो सुगन्ध पाओगे और यदि भट्टी फूँकनेवाले के पास जाओगे तो तुम्हारे कपड़े जलेंगे या दुर्गन्ध पाओगे।"
5. पुत्र-पुत्रियों के बीच भेदभाव रखना इस्लाम में वर्जित है, आगे की चर्चा में यह और स्पष्ट हो जाएगा।

बेटी है अनमोल

अत्यन्त खेद का विषय है कि कन्या का जन्म आज भी शोक और चिन्ता का कारण बनता है, जिसका चित्रण 1450 वर्ष पूर्व किया गया था—

"जब उनमें से किसी को बेटी के जन्म की शुभ सूचना मिलती है तो उसके चेहरे पर कलौंस छा जाती है।" (क़ुरआन, 16:58)

अरब में अज्ञानकाल के लोग बेटियों को ज़िन्दा ज़मीन में गाड़ देते थे—

"और जब जीवित गाड़ी गई कन्या से पूछा जाएगा कि उसकी हत्या किस अपराध में की गई।" (क़ुरआन, 81:8-9)

इस्लाम की क्रान्तिकारी शिक्षाओं एवं हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के प्रयासों से लोगों में लड़कियों के प्रति सोच बदल गई और तिरस्कार के स्थान पर उन्हें

प्रेम और स्नेह प्राप्त होने लगा।

1. क़ुरआन में बेटी के जन्म की सूचना को 'बुशरा' कहा गया जिसका अर्थ है शुभ-सूचना।
2. सन्तान-वध अपराध घोषित किया गया तथा कन्या-वध अत्यन्त क्रूर और जघन्य अपराध माना गया। (क़ुरआन, 81:8-9)
3. ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"जो व्यक्ति दो लड़कियों का पालन-पोषण करे यहाँ तक कि वे जवान हो जाएँ, तो क़ियामत (प्रलय) के दिन मेरा और उनका साथ इस प्रकार होगा (आपने ऊँगलियों को मिलाकर दिखाया)।"

(हदीस : बुख़ारी)

"बेटियाँ माता-पिता के लिए नरक की आड़ बन जाएँगी।"

(हदीस : इब्ने-माजा)

"जब किसी के यहाँ लड़की पैदा होती है तो ईश्वर उसके यहाँ फ़रिश्ते भेजता है जो आकर कहते हैं—ऐ घरवालो तुमपर शान्ति हो। वे लड़की को अपने परों की छाया में ले लेते हैं और उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहते हैं—"यह अबला है जो अबला से जन्मी है, जो इस बच्ची की देखभाल और पालन-पोषण करेगा, प्रलय तक ईश्वर की सहायता उसको प्राप्त होती रहेगी।" (हदीस : तबरानी)

"लड़कियों से नफ़रत न करो, वे तो हमदर्द और मूल्यवान हैं।"

(हदीस : मुसनद अहमद)

एक व्यक्ति, जो पश्चाताप की आग में जल रहा था, हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के पास आया और बोला : हम अज्ञानकाल में मूर्तिपूजा करते और औलाद को मार डालते थे। मेरी एक बेटी थी, जब मैं उसे बुलाता तो वह दौड़कर मेरे पास चली आती थी। एक दिन मैंने उसको बुलाया तो वह खुशी-खुशी चली आई और मेरे पीछे-पीछे चल पड़ी। जब मैं एक कुएँ के पास पहुँचा तो मैंने उसे कुएँ में डाल दिया, वह अब्बा-अब्बा कहकर पुकारने लगी, यह उसकी आख़िरी आवाज़ थी।" यह घटना सुनकर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के आँख से आँसू जारी हो गए यहाँ तक कि आपकी मुबारक दाढ़ी भीग गई।

इस प्रकार अज्ञानकाल की कन्या-वध की क्रूरतम प्रथा हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने पूर्ण रूप से समाप्त कर दी और बेटों को बेटियों पर प्राथमिकता देना समाप्त हो गया। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) और इस्लाम कन्या वर्ग के लिए वरदान और सम्पूर्ण दयालुता हैं।

आज फिर विज्ञान के सहारे लिंग परीक्षण कराकर कन्या को संसार में आने से रोका जा रहा है। यह भी उसी प्रकार की क्रूरता है, इसे भी इस्लामी शिक्षाओं के माध्यम से ही समाप्त किया जा सकता है।

दयालुता समाज में

सामाजिक संरचना को सुदृढ़ रखने तथा उसमें मानवता के फलने-फूलने हेतु अनुकूल वातावरण बनाए रखने के उद्देश्य से इस्लाम धर्म में बहुत ही महत्वपूर्ण शिक्षाएँ दी गई हैं, जिनपर चलकर समाज दयाभाव, समता और समरसता के शिखर पर पहुँच सकता है। मुख्य बिन्दुओं की चर्चा संक्षेप में प्रस्तुत है–

नैतिकता की अनिवार्यता

इस्लाम नैतिकता को समाज में प्रचलित देखना चाहता है–सत्य, न्याय, वचन-पालन, आपसी सहयोग, अनुशासन, संयम, बहादुरी समाज में फले-फूले। झूठ, धोखेबाज़ी, चोरी-डकैती, व्यभिचार, भ्रष्टाचार आदि बुराइयाँ न पनप पाएँ। क़ुरआन और हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के कथनों में इसपर बहुत ज़ोर दिया गया है। इनको ईशभय और परलोकवाद से जोड़ा गया है जिससे बाहरी दबाव के बिना भी मनुष्य नैतिकता के कठिन मार्ग पर चल सकता है। अगर परलोक की जवाबदेही पर ईमान न हो, तो इनसान अधिक समय तक सच्चाई पर नहीं चल सकता। इसके साथ ही शराफ़त की भाषा न समझनेवालों के लिए दण्ड संहिता (Penal Code) का प्रावधान भी है, जो अन्तिम हथियार के तौर पर ही प्रयुक्त किया जाता है।

सारे इनसान बराबर हैं

ऊँच-नीच, छूतछात, भेदभाव के रहते समाज में दयाभाव, भाईचारा और सौहार्द का वातावरण पैदा नहीं हो सकता। इस्लाम ने इस तथ्य पर बल दिया कि सारे इनसान बराबर हैं, क्योंकि सब एक ही जोड़े की सन्तान हैं–

> "ऐ लोगो! हमने तुम्हें एक पुरुष और एक स्त्री से पैदा किया और तुम्हें बिरादरियों और क़बीलों का रूप दिया ताकि तुम एक-दूसरे को पहचानो। वास्तव में अल्लाह के यहाँ तुममें सबसे अधिक प्रतिष्ठित वह है जो तुममें सबसे अधिक ईश-भय रखता है।" (क़ुरआन, 49:13)

आख़िरी हज के ऐतिहासिक सम्बोधन में ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने घोषणा की—

"लोगो! तुम सबका रब भी एक है और बाप भी एक है, तुम सब आदम की औलाद हो, और आदम मिट्टी से बने थें। इसलिए किसी अरब को ग़ैर-अरब पर बड़ाई नहीं, न गोरे को काले पर, बड़ाई केवल ईशपरायणता के आधार पर है।"

इन शिक्षाओं पर पूरा अमल हुआ। अश्वेत हज़रत बिलाल (रज़ि॰) की वही हैसियत थी जो अन्य सहाबा की थी। रूम के सुहेब (रज़ि॰), ईरान के सलमान फ़ारसी (रज़ि॰) भी अरब मुस्लिमों के बराबर प्रतिष्ठित थे। बराबरी का पाठ पढ़ाने के लिए दिन में पाँच बार कन्धे से कन्धा मिलाकर नमाज़ पढ़ी जाती है जिससे ऊँच-नीच का अहंकार समाप्त हो जाता है। हज के अवसर पर तो दुनिया के हर कोने से आनेवाले हज-यात्री एक ही ड्रेस—दो सफ़ेद चादरें लपेटे हज की प्रक्रिया पूरी करते हैं।

दासों के प्रति दयाभाव

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) दासों के मसीहा हैं। इस्लाम ने इस कुप्रथा को धीरे-धीरे समाप्त किया। उनके मानवाधिकार बहाल किए। देखिए ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के कुछ महत्वपूर्ण निर्देश—

"तुम्हारे दास तुम्हारे भाई हैं, इसलिए तुममें से जिसके कब्ज़े में उसका भाई हो उसे चाहिए कि वैसा ही खिलाए और पहनाए जैसा स्वयं खाता और पहनता है।" (हदीस : बुख़ारी)

"तुममें से कोई यह न कहे कि मेरा दास, मेरी दासी बल्कि यूँ कहे, मेरा बच्चा, मेरी बच्ची।"

उपरोक्त निर्देशों के द्वारा दासों के प्रति लोगों की धारणा में बदलाव लाया गया। उसके उपरान्त दासों को आज़ाद कराने की प्रक्रिया लागू की गई—

(1) लोगों को इस बात पर उभारा गया कि दास को आज़ाद करें, यह पुण्य का कार्य है। इसका बहुत अच्छा प्रभाव हुआ।

(2) पापों के प्रायश्चित में दासों को मुक्त करने का प्रावधान रखा गया।

(3) दास को अपने मालिक से समझौता करने की अनुमति दी गई कि तय

रक़म कमाकर देने पर दास मुक्त हो जाएगा। यह लिखित समझौता होता था। इस प्रक्रिया से भी बहुत-से दास आज़ाद हुए। आवश्यकता पड़ने पर इसके लिए सरकारी सहायता भी दी गई।

(4). पढ़े-लिखे दासों से यह समझौता भी हुआ कि वह लोगों को पढ़ना-लिखना सिखा दें और मुक्त हो जाएँ।

इस प्रक्रिया को अपनाकर कुछ ही वर्षों में दास प्रथा से मुक्ति मिल गई। यही नतीजा है कि पूर्व में दास रहे मुसलमानों ने ज्ञान के क्षेत्र में ऊँचा स्थान पाया तथा उच्च पदों पर कार्य किया।

अनाथों के प्रति दयालुता

दासों की तरह एक अन्य कमज़ोर वर्ग अनाथों का है। इस्लाम ने उनके संरक्षण और सहायता का विशेष प्रबन्ध किया।

(1) उनका माल अवैध तरीक़े से हड़पने की मनाही—

> "जो लोग अनाथों के माल अन्याय के साथ खाते हैं, वास्तव में वे अपने पेट में आग भरते हैं, और वे अवश्य ही भड़कती हुई आग में पड़ेंगे।" (क़ुरआन, 4:10)
>
> "और यतीम (अनाथ) के माल को हाथ मत लगाओ मगर उत्तम ढंग से।" (क़ुरआन, 17:34)

(2) अनाथों पर ख़र्च करने को कहा गया—(क़ुरआन, 2:215, 4:36 व 4:8) तथा नेकी का कार्य बताया गया। (क़ुरआन, 2:177)

(3) अनाथों को दबाकर रखने को मना किया गया। (क़ुरआन, 93:9)

(4) हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने फ़रमाया कि मैं और अनाथ की सहायता करनेवाला स्वर्ग में समीप रहेंगे (आपने दो उँगलियों को मिलाकर संकेत दिया)।

इस प्रकार इस्लामी व्यवस्था में अनाथों, विधवाओं तथा अन्य कमज़ोर वर्ग पर विशेष ध्यान दिया गया। यह दयालुता और कृपाशीलता का स्पष्ट प्रमाण है।

पड़ोसी

आमतौर पर पड़ोस में बसनेवालों में छोटी-मोटी बातों के कारण मनमुटाव और कलह पाई जाती है, जबकि पड़ोस से हर समय काम पड़ता है। इस्लाम ने जो शिक्षाएँ दीं उनके द्वारा एक पड़ोसी दूसरे पड़ोसी के बहुत निकट आ जाता है और प्रेम व भाईचारे का वातावरण निर्मित होता है। क़ुरआन में निर्देश दिया गया—

> "अल्लाह की बन्दगी करो और उसके साथ किसी को साझी न बनाओ, और अच्छा व्यवहार करो माता-पिता के साथ, नातेदारों, अनाथों, असम्पन्न लोगों, रिश्तेदार पड़ोसियों, अपरिचित पड़ोसियों, साथ रहनेवाले पड़ोसियों के साथ और मुसाफ़िरों और दास-दासियों के साथ।" (क़ुरआन, 4:36)

इस निर्देश में तीन प्रकार के पड़ोसी बताए गए हैं। प्रथम वह जो सम्बन्धी है अर्थात् उससे पहले से रिश्ता-नाता है, दूसरे वह जो नातेदार नहीं मगर पड़ोस में है, तीसरे वह जिनसे कार्य-स्थल पर, आफ़िसों में या यात्रा के दौरान वास्ता पड़ता है जो अस्थाई होता है। इन तीनों से अच्छा व्यवहार करने की हिदायत कर दी गई। उल्लेखनीय है कि इसमें धर्म या जाति का भेद नहीं।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के निर्देश देखिए—

(1) वह आस्थावान नहीं जिसका पड़ोसी उसकी शरारत से असुरक्षित हो। (हदीस : बुख़ारी)

(2) वह व्यक्ति स्वर्ग में प्रवेश नहीं करेगा, जिसका पड़ोसी उसकी शरारतों से सुरक्षित नहीं। (हदीस : मुस्लिम)

(3) एक व्यक्ति ने ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) से पूछा कि मुझे कैसे ज्ञात हो कि मैंने अच्छा कार्य किया है या बुरा, तो आपने उत्तर दिया कि जब तुम अपने पड़ोसियों से सुनो कि अच्छा काम किया है तो समझ लो कि अच्छा है, और जब पड़ोसियों से सुनो कि बुरा काम किया तो समझो बुरा किया। (हदीस : इब्ने-माजा)

(4) एक पड़ोसी दूसरे पड़ोसी के माल तथा इज़्ज़त का रखवाला होता है, कहीं रक्षक ही भक्षक बन जाए तो उसकी सज़ा भी अधिक होनी चाहिए। इस पृष्ठभूमि में हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का यह निर्देश कितना सार्थक

है—"पड़ोसी की पत्नी से व्यभिचार करना दस औरतों से व्यभिचार करने से ज़्यादा गम्भीर है, और पड़ोसी के घर चोरी करना दस घरों में चोरी करने से अधिक बुरा है।"

(5) आपसी सहानुभूति एवं दूसरे की ख़ैर-ख़बर रखने के सम्बन्ध में हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का यह कथन स्वर्णाक्षरों से लिखने योग्य है—"वह मोमिन (आस्थावान) नहीं जो खुद पेट भर खाकर सोए और उसका पड़ोसी भूखा रहे।"

(6) पड़ोस में जो भी बसा है, चाहे वह जिस धर्म का माननेवाला हो, उसके साथ अच्छा व्यवहार करने की ताकीद है—ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) अपने यहूदी पड़ोसी को भी उपहार भिजवाते थे।

(7) अगर हमारा पड़ोसी हमारे साथ अच्छा व्यवहार न भी करे, तब भी हमें उसके साथ अच्छा व्यवहार ही करना चाहिए। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की जीवन की मशहूर घटना है कि मक्का में आपकी पड़ोसन प्रतिदिन आपके ऊपर कूड़ा फेंकती थी। आप (सल्ल॰) कपड़े झाड़कर आगे बढ़ जाते थे। एक दिन कूड़ा नहीं डाला गया। आपने पूछताछ की तो मालूम हुआ कि कूड़ा डालनेवाली बीमार है। आप तुरन्त उस औरत का कुशल-क्षेम पूछने उसके घर पहुँच गए।

आपका ये आदर्श हमें अपने सामने रखना चाहिए।

भाईचारा (बन्धुत्व)

दयालुता प्रधान धर्म होने के कारण ही इस्लाम ने आपसी हमदर्दी, सहानुभूति व भाईचारे की शिक्षा दी। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के आह्वान से पूर्व अरब भू-भाग में क़बीलाई शत्रुता, बात-बात पर झगड़ना आम बात थी। इस्लाम ने उनके बीच पारस्परिक सौहार्द का वातावरण बनाया।

(1) ईश्वर की कृपा से दिल जोड़े—"और ईश्वर की उस कृपा को याद करो जो तुमपर हुई, जब तुम आपस में एक-दूसरे के शत्रु थे तो उसने तुम्हारे दिलों को परस्पर जोड़ दिया और तुम उसकी कृपा से भाई-भाई बन गए।" (क़ुरआन, 3:103)

(2) झगड़े से हवा उखड़ जाती है—"अल्लाह और उसके रसूल की आज्ञा मानो

और आपस में न झगड़ो अन्यथा हिम्मत टूट जाएगी और तुम्हारी हवा उखड़ जाएगी।" (क़ुरआन, 8:46)

(3) मतभेद हो तो क्या करें—"यदि तुममें किसी बात पर झगड़ा हो जाए तो उसको अल्लाह और उसके रसूल की ओर लौटा दो।" (क़ुरआन, 4:59)

अर्थात् अल्लाह और रसूल (सल्ल.) की शिक्षाओं के आधार पर झगड़े को निपटाओ, अपने-अपने अहं (Ego) का मुद्दा न बनाओ।

(4) आपस में समझौता कराओ। हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने कहा, "दो आदमियों में समझौता कराना रोज़ा-नमाज़ से ज़्यादा बड़ा है।" (हदीस : अबू दाऊद)

नबी (सल्ल.) ने यह भी कहा कि आस्थावान एक शारीरिक इकाई के समान हैं कि यदि शरीर के एक अंग में पीड़ा होती है, तो पूरा शरीर अनिद्रा और दर्द झेलता है।

स्पष्ट है कि इस्लाम आपसी प्रेम, भाईचारा एवं सौहार्द देखना चाहता है।

क्षमा-भाव

ईश्वर अत्यन्त क्षमा करनेवाला है, इसलिए उसे क्षमा करनेवाले मनुष्य पसन्द हैं और इसी का आदेश पवित्र क़ुरआन में हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) और आस्थावान लोगों को दिया गया—

"(ऐ नबी) तुम उनसे क्षमा का बर्ताव करो और उनके लिए मुक्ति की दुआ करते रहो।" (क़ुरआन, 3:159)

"वे लोग जो सम्पन्नता और तंगी, हर परिस्थिति में (ईश मार्ग में) ख़र्च करते हैं और गुस्से को पी जाते हैं और लोगों के साथ क्षमाशीलता का व्यवहार करते हैं, तो अल्लाह भलाई करनेवाले ऐसे लोगों को पसन्द करता है।" (क़ुरआन, 3:134)

हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) स्वयं बहुत क्षमा करते थे। आपने अपने कट्टर दुश्मनों को भी उस समय माफ़ कर दिया जब आप उनपर पूरा नियन्त्रण पा चुके थे। इसी प्रकार की दीक्षा आप अपने अनुयाइयों को भी देते थे। एक व्यक्ति ने नबी (सल्ल.) से पूछा कि मैं अपने सेवक को अधिकतम कितनी बार क्षमा करूँ। आपने क़हा, "प्रत्येक दिन सत्तर बार।" (हदीस : तिर्मिज़ी)

ग़ैर-मुस्लिमों के साथ दयाभाव

इस्लाम का अमन व शान्ति का सन्देश सभी इनसानों के लिए है, क़ुरआन के प्रारम्भिक अंश में सभी इनसानों से सम्बोधन है—

"ऐ लोगो! बन्दगी करो अपने पालनहार की जिसने तुम्हें और तुमसे पहले के लोगों को पैदा किया।" (क़ुरआन, 2:21)

परन्तु इनसान को आचार-विचार की स्वतन्त्रता भी दी गई है, इसके अनुसार वह चाहे तो इस्लाम को अपनाए अथवा अस्वीकार करे। क़ुरआन में अल्लाह फ़रमाता है—

"कह दो : "यह सत्य है तुम्हारे रब की ओर से। तो अब जो कोई चाहे माने और जो चाहे इनकार कर दे।" (क़ुरआन, 18:29)

यह भी घोषणा कर दी गई कि इस्लाम स्वीकार करने के लिए दबाव नहीं डाला जाएगा—

"दीन (धर्म) में कोई ज़बरदस्ती नहीं।" (क़ुरआन, 2:256)

दूसरे धर्म के लोगों के पूज्य को बुरा कहने से रोक दिया गया—

"ये लोग अल्लाह के सिवा जिनको पुकारते हैं उन्हें बुरा-भला न कहो।" (क़ुरआन, 6:108)

तटस्थ व उदासीन ग़ैर-मुस्लिमों से अच्छा व्यवहार करने की ताकीद की गई।

"अल्लाह तुमको उन लोगों के साथ एहसान करने और न्याय का व्यवहार करने से मना नहीं करता जो तुमसे धर्म के बारे में नहीं लड़े और तुमको तुम्हारे घरों से नहीं निकाला।" (क़ुरआन, 60:8)

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के समय में पहली ग़ैर-मुस्लिम प्रजा 'नजरान' के ईसाइयों की थी। आप (सल्ल॰) ने लिखित घोषणा-पत्र द्वारा उन्हें जो अधिकार दिए थे उनका सार इस प्रकार है—

1. उनके जान-माल और जायदाद सुरक्षित रहेंगे।
2. उनके धार्मिक प्रबन्ध अपरिवर्तित रहेंगे।
3. उनसे सैन्य सेवा नहीं ली जाएगी।

4. उनके देश पर सैन्य कार्यवाही नहीं होगी।

5. मुक़द्दमों में न्याय होगा, कोई अत्याचार न होने पाएगा।

6. ब्याज पूर्ण रूप से प्रतिबन्धित होगा।

इस्लाम के दूसरे शासनाध्यक्ष हज़रत उमर (रज़ि॰) के ज़माने में जब यरुशलम पर विजय प्राप्त हुई तो वहाँ की ईसाई प्रजा को लगभग यही अधिकार प्रदान किए थे।

ईसाई विद्वान सर आर्नल्ड ने अपनी पुस्तक 'Preachings of Islam' में इसी तथ्य को इंगित किया है—स्वयं मुहम्मद (सल्ल॰) ने कई ईसाई क़बीलों से समझौते किए जिनके अनुसार आपने उनकी सुरक्षा का ज़िम्मा लिया, उन्हें अपने धर्म पर आज़ादी के साथ अमल करने की गारन्टी दी, उनके धार्मिक नेताओं के उन तमाम अधिकारों और सत्ता को बाक़ी रखा जो उन्हें इस्लाम से पहले प्राप्त थी। (पृ॰ 48)

महिला वर्ग पर विशेष दयालुता

डॉक्टर उस मरीज़ की ओर तुरन्त ध्यान देता है जो नाज़ुक व आपात स्थिति में हो। इस्लाम ने महिला वर्ग पर इसी लिए विशेष दयालुता की क्योंकि यह वर्ग भी दबा-कुचला और शोषण का शिकार था। अरब में नारी का अस्तित्व ही अभिशाप माना जाता था और बेटी का पैदा होना एक अपशकुन था, जिन्हें दुनिया में जीने का अधिकार नहीं था। ऐसी प्रतिकूल व विषम परिस्थिति में हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने नारी-जगत् के लिए एकदम अनुकूल वातावरण बनाया, यह किसी चमत्कार से कम नहीं। अफ़सोस कि लोगों के दुष्प्रचार का हम भी शिकार हैं, इसलिए इस्लाम की शीतल छाया से लाभान्वित नहीं हो पाते। इस्लाम ने नारी-जगत् पर जो अद्वितीय अनुकम्पा और कृपा की है, यहाँ पर उसकी एक झलक ही प्रस्तुत की जा सकती है।

1. औरत भी वैसी इनसान है जैसा मर्द है (क़ुरआन, 4:1) और दोनों वर्ग आध्यात्मिक उन्नति कर सकते हैं—

> "उनके रब ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और कहा कि मैं तुममें से किसी कर्म करनेवाले के कर्म को अकारथ नहीं करूँगा चाहे वह पुरुष हो या स्त्री, तुम सब आपस में एक-दूसरे से हो।"
>
> (क़ुरआन, 3:195)

2. क़ुरआन ने इस अवधारणा को समाप्त किया कि नारी स्वर्ग में नहीं जाएगी। (क़ुरआन, 4:124)

3. ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के कथनानुसार—

- दो बेटियों के पालन-पोषण पर परलोक में हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का साथ होने की सूचना। बेटी के पैदा होने के स्थान को फ़रिश्तों द्वारा घेर लेना।
- बेटियाँ माता-पिता के लिए नरक से आड़ का माध्यम।
- माँ के पैरों तले जन्नत (स्वर्ग)।
- सन्तान द्वारा सेवा-भाव में माता को प्राथमिकता।
- दुनिया की नेमतों में बड़ी नेमत नेक (व चरित्रवान) पत्नी।
- कन्या-वध घोर व जघन्य अपराध।

4. आर्थिक क्षेत्र में नारी को सबसे पहले अधिकार इस्लाम ने ही दिया—

- विवाह के समय मेहर (विवाह धन-राशि) अनिवार्य। (क़ुरआन, 4:4)
- पिता, पति और पुत्र की छोड़ी हुई सम्पत्ति में उत्तराधिकार।
- बेटी, पत्नी, माँ और बहन—हर हैसियत में उसपर जीविकोपार्जन या वित्तीय बोझ नहीं—यह ज़िम्मेदारी पिता, पति, पुत्र, भाई की होगी।
- महिला को प्राप्त धन-सम्पत्ति पर उसका पूर्ण मालिकाना अधिकार।
- वह अपने धन से कारोबार स्वयं कर सकती है या कहीं निवेश कर सकती है।

5. सामाजिक अधिकार—

- निकाह के लिए लड़की की रज़ामन्दी ज़रूरी है।
- यदि पति नाकारा या अत्याचारी हो तो ख़ुलअ (तलाक़ प्राप्त करने) का अधिकार है।
- विधवा तथा तलाक़शुदा औरतों को विवाह का अधिकार, बल्कि प्रोत्साहन।
- दीवानी और फ़ौजदारी क़ानूनों में मर्द-औरत के अधिकार एक जैसे हैं।

6. शिक्षा—

ज्ञान-प्राप्ति औरत-मर्द दोनों के लिए अनिवार्य है। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) औरतों को अलग से समय देते थे। आपकी सम्माननीय पत्नी हज़रत आईशा (रज़ि०) औरतों, यहाँ तक कि मर्दों को भी शिक्षा देती थीं। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने दासियों तक को पढ़ाने के निर्देश दिए। इस तरह हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने बेटी को ज़मीन में ज़िन्दा गाड़ देनेवाले लोगों में वह अलख जगाई कि उस बेहूदा और क्रूर परम्परा की धारा को पूर्णरूप से भलाई की ओर मोड़ दिया।

आज का इनसान एक ओर तो नई वैज्ञानिक सुविधाओं का लाभ उठाकर लड़कियों को दुनिया में आने से रोकने का अपराध कर रहा है तो दूसरी ओर नारी के स्वाभाविक कार्यों और उसके मनोविज्ञान के अनुरूप ज़िम्मेदारियों से हटाकर उसको अपने आनन्द के लिए 'देह-प्रदर्शन' आदि के लिए प्रेरित करने की ग़लती भी कर रहा है। आधुनिक नारी को जो कुछ दिया जा रहा है वह उसके 'नारीत्व' को समाप्त कर और मर्द बनाकर दिया जा रहा है, जबकि महिला वर्ग तो हमारी आगामी पीढ़ी का पहला स्कूल है। उनको अच्छा इनसान, अच्छा नागरिक बनाने की बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी इस वर्ग पर है। घर को स्वर्ग का नमूना बनाने का दायित्व भी स्त्री पर है कि मर्द बाहर की टेन्शन, चिन्ता और अवसाद से घर पहुँचकर मुक्त हो जाए और सुख-शान्ति प्राप्त कर सकें।

वैज्ञानिकों को प्रोत्साहित किया

चर्च और विज्ञान का टकराव जगज़ाहिर है। इस्लाम ने सोच-विचार, अन्वेषण, शोध, ज्ञान-प्राप्ति आदि सबको बढ़ावा दिया। दुआ सिखाई गई कि ऐ हमारे रब! हमारे ज्ञान में वृद्धि कर (क़ुरआन, 20:114)। धरती और आकाश में जो निशानियाँ हैं उनपर चिन्तन-मनन करने को कहा गया। इनसान स्वयं अपनी रचना पर विचार करे इसका आह्वान किया गया। क़ुरआन, विज्ञान का ग्रन्थ नहीं है फिर भी उसमें अनेक वैज्ञानिक तथ्य मौजूद हैं जिनकी प्रामाणिकता कभी अस्वीकार नहीं की जा सकी। बच्चे के पैदा होने के चरण (75:37-39), पानी का बरसना (23:18), पौधों का उगना, समुद्र के नीचे अन्धेरा होना (24:40), समुद्र में खारे पानी के बीच मीठे पानी की धारा का

प्रवाह (55:19-20), महाविस्फोट सिद्धान्त (Big Bang Theory) (21:30), सूर्य, चन्द्रमा और उनके प्रकाश की वास्तविकता (71:15-16) आदि क़ुरआन में उल्लिखित हैं। इन विषयों के विशेषज्ञ क़ुरआन के 1450 वर्ष पूर्व के उल्लेख पर आश्चर्य में पड़ जाते हैं। (देखिए पुस्तक 'क़ुरआन और आधुनिक विज्ञान' : डॉ० मौरिस बुकैले)।

यही कारण है कि एक समय था जब मुस्लिम देशों में भूगोल, गणित, रसायनशास्त्र, भौतिक विज्ञान, सागरीय विज्ञान आदि में बड़े मौलिक शोध हुए जिन्हें आज भी पूर्ण मान्यता है। आशय यह है कि इस्लाम ज्ञान-विज्ञान को बढ़ावा देता है, उनका विरोधी नहीं है।

अध्याय-4

शासन-प्रशासन में मानवाधिकार और दयालुता

शासन-प्रशासन और क़ानून-व्यवस्था बनाए रखने में सामान्यतया कठोर निर्णय लेने पड़ते हैं, मगर इस्लामी व्यवस्था में यहाँ भी दयाभाव को प्राथमिकता है। न्यायप्रियता और निष्पक्षता पर बल है, शासन-प्रशासन के पास उपलब्ध शक्ति को ईश्वर की अमानत और ज़िम्मेदारी समझा गया है और मानवाधिकार का हनन न हो इसका पूरा ध्यान रखा गया है। प्रशासनिक व्यवस्था कमज़ोरों, महिलाओं और अनाथ बच्चों का सहारा होती है। इस्लामी शिक्षाएँ तथा इतिहास की गवाही प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। यहाँ संक्षेप में कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों को प्रस्तुत किया जा रहा है—

न्यायप्रियता

इस्लाम में न्याय को बहुत महत्त्व दिया गया है और क़ुरआन में जगह-जगह मनुष्य को न्याय करने के आदेश मौजूद हैं। ईश्वर के गुणवाचक नामों में 'आदिल' अर्थात् न्यायकर्ता भी है। स्पष्ट है ईश्वर स्वयं न्यायकर्ता है और अपने बन्दों को भी न्याय का आदेश देता है। क़ुरआन की कुछ प्रमुख व महत्वपूर्ण शिक्षाएँ इस प्रकार हैं—

> "जब निर्णय करो तो उनके बीच न्याय के साथ निर्णय करो। निश्चय ही ईश्वर न्याय करनेवालों से प्रेम करता है।" (क़ुरआन, 5:42)

> "और जब लोगों के बीच फ़ैसला करो, तो न्यायपूर्वक फ़ैसला करो।" (क़ुरआन, 4:58)

> "ऐ ईमान लानेवालो! अल्लाह के लिए गवाही देते हुए इनसाफ़ पर मज़बूती के साथ जमे रहो, चाहे वह स्वयं तुम्हारे अपने या माता-पिता और नातेदारों के विरुद्ध ही क्यों न हो। कोई धनवान हो या निर्धन, अल्लाह उन दोनों से अधिक क़रीब है। इसलिए तुम न्याय

करने में अपनी इच्छाओं के पीछे मत चलो। अगर तुम हेर-फेर करोगे या कतराओगे तो याद रखो कि ईश्वर तुम्हारे कामों को अच्छी तरह जानता है।" (क़ुरआन, 4:135)

"ऐ लोगो जो ईमान लाए हो! तुम अल्लाह के लिए इनसाफ़ पर मज़बूती से चलनेवाले, इनसाफ़ की गवाही देनेवाले बनो। देखो, कहीं ऐसा न हो कि किसी विशेष सम्प्रदाय की शत्रुता तुम्हें न्याय से विरुद्ध कर दे। न्याय करो क्योंकि यही धर्मपरायणता के अनुकूल है।" (क़ुरआन, 5:8)

हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) का आचरण व सद्व्यवहार और उसके बाद इस्लामी ख़लीफ़ाओं का शासनकाल गवाह है कि इस्लाम में निष्पक्ष और बेलाग फ़ैसले किए गए। मानवजाति आज उस न्याय को तरस रही है जब इस्लामी राज्य के ख़लीफ़ा (शासक) हज़रत अली (रज़ि.), न्यायाधीश की अदालत में मुक़द्दमे के पक्ष के रूप में एक आम आदमी की तरह उपस्थित होते हैं। हज़रत उमर (रज़ि.) स्वयं अपने बेटे के विरुद्ध फ़ैसला सुनाते हैं और सज़ा देते हैं। आज इनसाफ़ बिक रहा है, उसके दरवाज़े निर्धनों और कमज़ोरों के लिए बन्द हैं। इनसाफ़ में निष्पक्षता का अभाव है और यह बहुत मँहगा है। मुक़द्दमें वर्षों तक चलते हैं।

अन्तिम हज का ऐतिहासिक भाषण

हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने अपने आख़िरी हज के अवसर पर अपने सवा लाख अनुयाइयों के समक्ष जो महत्वपूर्ण भाषण दिया था वह हदीस और इतिहास की पुस्तकों में अक्षरशः सुरक्षित है। यह मानवाधिकारों का बेहतरीन दस्तावेज़ है जो इनसानों को इनसानियत का पाठ पढ़ाता है। प्रकाश की एक ऐसी किरण है जो घोर अन्धकार में उतर आई है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह समाज में पूरी तरह लागू हुआ और उस समय हुआ जब मानवाधिकार को कोई जानता भी नहीं था। ख़ुद यूरोप में 13वीं शताब्दी से मानवाधिकारें पर सोच-विचार प्रारम्भ हुआ और संयुक्त राष्ट्र द्वारा अभी सन् 1948 में मानवाधिकार का अन्तर्राष्ट्रीय घोषणा-पत्र लागू किया गया। हम बिना किसी व्याख्या के उस भाषण को उद्धृत कर रहे हैं जो आज से 1450 वर्ष पहले हज़ के अवसर पर ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने मक्का में दिया था।

"लोगो! मेरी बात ध्यान से सुनो, हो सकता है इस वर्ष के बाद इस स्थान पर मैं तुमसे कभी न मिल पाऊँ। अज्ञानकाल की समस्त रीतियाँ मेरे पैर के नीचे हैं (अर्थात् निरस्त कर दी गई हैं), लोगो! तुम सबका प्रभु एक है और बाप भी एक है। किसी अरबवाले को किसी ग़ैर-अरब पर बड़ाई नहीं, न किसी गोरे को काले पर, बड़ाई केवल परहेज़गारी व ईशपरायणता के आधार पर है।

हर मुसलमान दूसरे का भाई है, लोगो! तुम्हारी जान और माल एक-दूसरे पर हराम हैं, जिस प्रकार यह (हज का) दिन है, यह महीना है और यह नगर (मक्का) है। (अर्थात् जान-माल को हानि पहुँचाना निषिद्ध है)।

अपराधी अपने अपराध के लिए स्वयं ज़िम्मेदार है, उसके पिता या पुत्र से बदला नहीं लिया जाएगा।

तुम्हारे ग़ुलाम—तुम जो स्वयं खाओ वही उनको खिलाओ, जो स्वयं पहनो वही उनको पहनाओ।

अज्ञानकाल के हत्या के समस्त प्रकरण (जिसमें बदला लेने का चक्र चलता था) निरस्त किए जाते हैं। ब्याज के सभी अनुबन्ध समाप्त किए जाते हैं, हाँ अपना मूलधन प्राप्त करने के तुम अधिकारी हो। सबसे पहले मैं अपने ही परिवार के अब्बास-बिन-अब्दुल मुत्तलिब का ब्याज ख़त्म करता हूँ।

ऐ लोगो! तुम अपनी पत्नियों पर अधिकार रखते हो और वे भी तुमपर अधिकार रखती हैं। तुम्हारी ओर से उनकी ज़िम्मेदारी है कि वे तुम्हारे बिस्तर पर किसी ग़ैर (अन्य पुरुष) को न आने दें, क्योंकि यह तुम्हें सहन नहीं है, और उनपर स्वयं भी अनिवार्य है कि वे अश्लीलता का कोई कार्य न करें। मैं औरतों के बारे में तुम्हें वसीयत करता हूँ कि उनके साथ भला व्यवहार करो।

ऐ लोगो! मेरे बाद कोई सन्देष्टा नहीं और न ही तुम्हारे बाद कोई नई उम्मत (समुदाय) पैदा होगी, इसलिए अपने प्रभु पालनहार की उपासना करो, पाँचों समय की नमाज़ें पढ़ो, रमज़ान के रोज़े रखो, अपने माल में से शुद्ध मन से ज़कात दो, अपने प्रभु के घर का दर्शन

(हज) करो; अपने अमीर (इस्लामी शासक) का आज्ञापालन करो, ताकि तुम्हें स्वर्ग प्राप्त हो। यदि कोई नक्टा हब्शी अमीर हो और वह ईश्वर के ग्रन्थ (क़ुरआन) के अनुसार चले तो उसकी बात सुनो और आज्ञापालन करो।

मैं तुम्हारे बीच ऐसी चीज़ छोड़ रहा हूँ कि यदि तुम उसे मज़बूती से पकड़े रहोगे तो कभी गुमराह नहीं हो सकते—वह है अल्लाह की किताब (क़ुरआन) और मेरी सुन्नत (हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का सद्व्यवहार जो हदीस के रूप में सुरक्षित है)।"

अन्त में निर्देश दिया कि उपस्थित जन इन उपदेशों को उन लोगों तक पहुँचा दें, जो यहाँ उपस्थित नहीं हैं।

कुछ इतिहास के झरोखे से

मानवजाति के लिए दयालुता, कृपाशीलता और न्याय व क्षमा का जो आदर्श ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने प्रस्तुत किया वह विशुद्ध एवं पूर्ण है तथा रहती दुनिया तक के लिए अनुकरणीय है। उन्हीं बुनियादों पर जो व्यवस्था आगे चली इतिहास के पन्नों से उसकी कुछ घटनाएँ प्रस्तुत करना उचित होगा।

हज़रत उमर (रज़ि॰) इस्लामी शासन के दूसरे शासनाध्यक्ष थे, जिनका कार्यकाल साढ़े दस वर्ष का है। उनके नेतृत्व में इस्लामी शासन ईरान, सीरिया, मिस्र तक फैला हुआ था, फिर भी वे बहुत सादा जीवन व्यतीत करते थे। रात को गश्त लगाते और जनता का हाल जानने का प्रयास करते।

जब राशन पीठ पर लादा

गश्त के दौरान एक रात मदीना से तीन मील की दूरी पर हज़रत उमर (रज़ि॰) ने देखा कि एक महिला भोजन पका रही है और बच्चे रो रहे हैं। निकट पहुँचकर ज्ञात हुआ कि बच्चे भूखे हैं, राशन नहीं है, उनको बहलाने के लिए हांडी चूल्हे पर चढ़ा रखी है कि बच्चे सो जाएँ। हज़रत उमर (रज़ि॰) उसी समय वापस आए, सरकारी भंडार से राशन लिया और अपने सेवक असलम से कहा कि यह राशन का बोरा मेरी पीठ पर लादने में मदद करो। सेवक ने कहा कि आप बोझ न उठाएँ, यह राशन मैं पहुँचाए देता हूँ। उन्होंने तुरन्त

उत्तर दिया नहीं, प्रलय के दिन मेरा बोझ तुम नहीं उठाओगे। फिर राशन को अपनी पीठ पर लादकर महिला के घर तक पहुँचाया। महिला ने तुरन्त बच्चों के लिए खाना तैयार करके खिलाया। हज़रत उमर (रज़ि॰) को वह पहचानती न थी, उनको धन्यवाद देते हुए कहा—"अल्लाह तुम्हें अच्छा बदला दे, सच तो यह है कि ख़लीफ़ा होने योग्य तुम हो।" हज़रत उमर (रज़ि॰) ने तब भी अपनी असलियत नहीं बताई और कहा कि—"जब तुम मदीना आओगी तो मुझे वहीं पाओगी।"

जब प्रथम महिला ने नर्स का कर्त्तव्य निभाया

एक और रात की घटना है। नगर के बाहर एक टेन्ट लगा है। एक देहाती बद्दू बैठा है। टेन्ट के अन्दर से महिला के कराहने की आवाज़ आई। हज़रत उमर (रज़ि॰) ने बद्दू से पूछा तो उसने कहा पत्नी गर्भ से है अब प्रसव पीड़ा हो रही है और यहाँ सहायता के लिए कोई भी महिला दूर-दूर तक नज़र नहीं आ रही है। हज़रत उमर (रज़ि॰) तुरन्त घर पहुँचे, अपनी पत्नी को साथ लिया और उन्हें टेन्ट में पहुँचाकर बाहर बैठकर प्रतीक्षा करने लगे। थोड़ी देर में बच्चे के रोने की आवाज़ आई और हज़रत उमर (रज़ि॰) की पत्नी (रज़ि॰) ने उन्हें सम्बोधित करते हुए कहा—"अमीरुल-मोमिनीन, अपने दोस्त को बच्चे की पैदाइश की मुबारकबाद दीजिए।" 'अमीरुल-मोमिनीन अर्थात् इस्लामी शासनाध्यक्ष' यह सुनकर वह देहाती बद्दू सकपका गया कि इस्लामी साम्राज्य का शासक मेरे साथ ज़मीन पर बैठा है और उनकी धर्म-पत्नी प्रसव करा रही हैं।

जब पहरेदारी की

हज़रत अब्दुर्रहमान-बिन-औफ़ (रज़ि॰) का कथन है कि एक बार रात को हज़रत उमर (रज़ि॰) मेरे पास आए। मैंने कहा आपने क्यों कष्ट किया, मुझे बुलवा लिया होता। हज़रत उमर (रज़ि॰) ने कहा मुझे अभी सूचना मिली कि नगर से बाहर एक क़ाफ़िला पहुँचा है। क़ाफ़िले के लोग थके होंगे, आराम करना चाहेंगे, आओ हम और तुम चलकर पहरा दें। इस तरह दोनों ने रात भर पहरा दिया।

यह हमदर्दी और दयाभाव और ज़िम्मेदारी के एहसास के चन्द नमूने हैं, जिनसे सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि इस्लाम ने दयाभाव का क्या आदर्श प्रस्तुत किया। अब निष्पक्ष और बेलाग इनसाफ़ का नमूना भी देखिए।

हज़रत अली (रज़ि॰) और मुक़द्दमा

यह उस समय की सच्ची घटना है जब हज़रत अली (रज़ि॰) इस्लामी राज्य के चौथे शासनाध्यक्ष थे। उनका कवच कहीं गुम हो गया था जो उन्होंने एक यहूदी के पास देखकर पहचान लिया और यहूदी से कवच वापस करने की माँग रखी, मगर यहूदी ने देने से इनकार कर दिया। हज़रत अली (रज़ि॰) चाहते तो जबरन अपना सामान ले सकते थे, परन्तु उन्होंने क़ानून अपने हाथ में नहीं लिया और न्यायाधीश की अदालत में यहूदी के विरुद्ध दावा प्रस्तुत कर दिया। मुक़द्दमे में वादी की हैसियत में ख़लीफ़ा (इस्लामी शासक) अदालत पहुँचे और प्रतिवादी यहूदी को भी बुलाया गया। हज़रत अली (रज़ि॰) ने न्यायाधीश के सामने अपना पक्ष रखा। फिर यहूदी का बयान लिया गया। उसने कहा कि कवच मेरे क़ब्ज़े में है और यह मेरी सम्पत्ति है।

अब न्यायाधीश ने हज़रत अली (रज़ि॰) से कहा कि इस्लामी क़ानून के अनुसार आप अपने वाद के पक्ष में दो गवाह पेश करें। हज़रत अली (रज़ि॰) ने अपने सेवक क़म्बर को पेश किया और अपने दोनों बेटे हसन व हुसैन (रज़ि॰) को पेश किया। क़ाज़ी (न्यायाधीश) साहब ने कहा कि क़म्बर की गवाही तो स्वीकार्य है, मगर बेटों की गवाही नहीं मानी जाएगी। आपकी ओर से गवाही अपूर्ण है, इसलिए आपका दावा ख़ारिज किया जाता है। इस तरह इस्लामी राज्य के चौथे शासनाध्यक्ष हज़रत अली (रज़ि॰) मुक़द्दमा हार गए।

यहूदी यह सब देखकर हैरान था कि शक्तिशाली शासक के सही दावे को मात्र एक गवाही के अपूर्ण रह जाने पर निरस्त कर दिया गया, जबकि मैं प्रतिवादी दूसरे धर्म से सम्बन्ध रखता हूँ। इस निष्पक्ष, बेलाग फ़ैसले पर उसके दिल की दुनिया बदल गई। उसने कवच हज़रत अली (रज़ि॰) की ओर बढ़ाते हुए कहा, "ऐ मुस्लिमों के अमीर (शासक)! आपका दावा बिल्कुल सच है, यह कवच वास्तव में आपका ही है। इस आदर्श न्याय प्रक्रिया और फ़ैसले के बाद अब मैं इस्लाम धर्म स्वीकार करने को बेचैन हो गया हूँ।"

हज़रत अली (रज़ि॰) ने कहा, स्वागत है, "अब यह कवच तुम्हें मैं भेंट करता हूँ और मेरा यह घोड़ा भी तुम्हारे लिए उपहार है।"

(कन्ज़ुल उम्माल)

युद्ध और दयाभाव

सरसरी तौर पर युद्ध और दयाभाव एक-दूसरे के विपरीत और विरोधाभासी लगते हैं, मगर यह भी हक़ीक़त है कि कभी-कभी अहिंसा की स्थापना के लिए युद्ध की आवश्यकता होती है। युद्ध के बारे में इस्लाम का दृष्टिकोण यह है कि युद्ध और हत्या अस्ल में तो एक बुराई है, जिससे प्रत्येक व्यक्ति को बचना चाहिए, परन्तु जब दुनिया में उससे बड़ी बुराई अर्थात् ज़ुल्म, अत्याचार उद्दण्डता, उपद्रव और बिगाड़ फैल गया हो और उद्दण्ड लोगों ने जनमानस की सुख-शान्ति को ख़तरे में डाल दिया हो तो इस बड़ी बुराई को समाप्त करने मात्र के लिए युद्ध की अनुमति है।

इस दृष्टिकोण के अनुसार क्योंकि युद्ध का उद्देश्य विरोधी पक्ष को समाप्त करना या हानि पहुँचाना नहीं, बल्कि सिर्फ़ उसकी दुष्टता को समाप्त करना है, इसलिए इस्लाम यह उसूल व सिद्धान्त पेश करता है कि ज़ंग में केवल उतना ही बल प्रयोग हो जितना दुष्टता को समाप्त करने के लिए अपरिहार्य हो और यह बल प्रयोग मात्र उस वर्ग के विरुद्ध हो जिनसे शरारत का ख़तरा हो। शेष सभी वर्ग युद्ध के प्रभाव से बचे रहें। इसलिए इस्लाम इसके लिए नया शब्द 'जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह' अर्थात् 'अल्लाह के मार्ग में अत्यधिक प्रयास करना' प्रयुक्त करता है।

स्पष्ट है कि अपरिहार्य परिस्थिति में युद्ध का औचित्य समझ में आता है तथा किसी महान् उद्देश्य की पूर्ति के लिए इसकी आवश्यकता से इनकार भी नहीं किया जा सकता। इस्लाम इस तथ्य को स्वीकारने के उपरान्त युद्ध के क्षेत्र में व्याप्त भयावह अतियों को समाप्त करते हुए जो क्रान्तिकारी सुधार प्रस्तुत करता है वही अस्ल में इसके दयालुतापूर्ण प्रणाली होने का संकेत है।

युद्ध सम्बन्धी आचारसंहिता

युद्ध सम्बन्धी आचारसंहिता जो इस्लामी धर्मशास्त्र में विधिवत प्रस्तुत और व्यावहारिक रूप से लागू की गई है, यहाँ उसके केवल कुछ बिन्दु (Points) अथवा शीर्षक (Headings) उद्धृत किए जाते हैं—

1. अयुद्ध वर्ग

युद्ध में भाग न लेनेवाले इस वर्ग में आते हैं। इस्लामी नियमानुसार ऐसे

लोगों को न छेड़ा जाए और उनकी हत्या न की जाए। इस वर्ग में बच्चे, बूढ़े, महिलाएँ, बीमार, अन्धे, अपंग, यात्री, पुजारी, साधु-सन्त आदि आते हैं।

2. युद्धरत वर्ग से लड़ने के सिद्धान्त

- अनायास आक्रमण न किया जाए (जैसे—सोते समय)।
- शत्रु को आग में जलाने का निषेध।
- बाँधकर या कष्ट देकर मारने का निषेध।
- युद्धरत क्षेत्र के आस-पास लूटमार का निषेध।
- फ़सल और खेतों को बर्बाद करने का निषेध।
- शत्रु के मृत शरीर को नुक़सान पहुँचाने का निषेध।
- क़ैदी की हत्या नहीं की जाएगी।
- राजनयिक (दूत) की हत्या नहीं की जाएगी।
- समझौते के विरुद्ध कार्य नहीं होगा और समझौते के पक्षकारों को प्रताड़ित नहीं किया जाएगा।
- सेना रास्ते में अनियन्त्रित होकर नहीं चलेगी, अर्थात् आम लोगों की आवाजाही का ध्यान रखा जाएगा।

3. सेना को किसी मुहिम पर भेजते समय 'अनुशासन' एवं इस्लामी युद्ध सम्बन्धी नियमों की हिदायत की जाएगी।

4. युद्ध की कार्यवाही अमीर (शासक) की अगुवाई में उसकी अनुमति से होगी। रणभूमि में अमीर द्वारा नियुक्त सेनापति के आदेशों को मानना अनिवार्य होगा।

यहाँ यह स्पष्ट करना ज़रूरी है कि उपर्युक्त आचारसंहिता, ज़बानी जमा-ख़र्च नहीं था। इतिहास गवाह है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने इसे स्वयं पूर्णरूपेण लागू किया और इसपर आपके बाद आपके उत्तराधिकारियों ने अमल किया। वर्तमान सभ्य जगत् में युद्ध के नाम पर मानवाधिकारों की जो धज्जियाँ उड़ाई ज़ा चुकी हैं और अब भी जारी हैं उनकी पृष्ठभूमि में इस्लामी सुधार उसके दयालुतापूर्ण धर्म होने का स्पष्ट प्रमाण है।

अध्याय-5

अर्थव्यवस्था में सन्तुलन और दयाभाव

इस्लाम ने नैतिक, सामाजिक, पारिवारिक तथा आध्यात्मिक क्षेत्र में सन्तुलन, सामन्जस्य और दयालुता का जो उच्चतम आदर्श प्रस्तुत किया वह आश्चर्य में डाल देता है। परन्तु इससे आगे बढ़कर विशुद्ध सांसारिक और भौतिक समझे जानेवाले आर्थिक और वित्तीय क्षेत्र को जिस प्रकार दयाभाव, इनसानी हमदर्दी, आपसी सौहार्द से परिपूर्ण कर दिया गया है उसे देखकर अनायास ही मन पुकार उठता है कि यह वास्तव में अल्लाह कृपालु और दयालु द्वारा प्रदत्त शिक्षाएँ हैं। इसमें एक ओर असम्पन्न, ग़रीब और मुहताज पर पूर्ण फ़ोकस है तो दूसरी ओर व्यापारी और व्यावसायी के हितों का पूरा ध्यान है। उपभोक्ता को धोखा न दिया जाए, तो व्यापारी का पैसा भी क्रेता न मार बैठे। ज़मीन मालिक का अहित न हो, मगर शोषण मज़दूर का भी न हो। यह सन्तुलन केवल इस्लाम की ही देन है।

इस्लाम की आर्थिक प्रणाली की प्रमुख विशेषताओं को निम्न बिन्दुओं में प्रस्तुत किया जा रहा है–

1. मानवीय मूल्यों पर आधारित

इस्लाम का एक क्रान्तिकारी क़दम यह है कि उसने आर्थिक क्रिया को सम्पूर्ण मानवीय जीवन का अंग मानकर उसे नैतिकता से सम्बद्ध कर दिया। ज़ुल्म-ज़्यादती, अत्याचार और शोषण समाप्त हो और नैतिक गुणों को बढ़ावा मिले। लोग एक-दूसरे के साथ स्वेच्छा एवं निःस्वार्थ भाव से हमदर्दी और एहसान का व्यवहार करें और उनके बीच प्रेम-भाव बढ़े।

क़ुरआन ने सत्य-वचन पर बहुत बल दिया (33:70)। न्याय करने, न्याय पर डटे रहने, इनसाफ़ की गवाही देने का आदेश दिया (4:135, 4:58, 16:90-91)। माता-पिता, अनाथों और मुहताजों आदि पर ख़र्च करने पर उभारा (2:83, 2:177, 2:215, 4:36, 6:15, 6:152, 17:23, 17:34 37:26 आदि)।

2. ब्याज खाना एक जघन्य कृत्य

ब्याज (सूद) की मनाही तो हर धर्म में है, मगर ब्याज खाना जितना जघन्य कृत्य है, उतनी कठोरता इसके विरुद्ध इस्लाम के अतिरिक्त किसी ने नहीं दिखाई—

"ऐ ईमानवालो! अल्लाह से डरो और तुम्हारा जो ब्याज लोगों पर है उसे छोड़ दो अगर तुम आस्थावान हो। परन्तु यदि तुमने ऐसा न किया तो अल्लाह और उसके पैग़म्बर की ओर से तुम्हारे विरुद्ध युद्ध की घोषणा है।" (क़ुरआन, 2:278-279)

कितना दयाभाव निहित है इस युद्ध की घोषणा में उन लोगों के लिए जो चक्रवृद्धि ब्याज के बोझ तले सिसक रहे हैं।

कुछ वर्षों पहले तक एक कमज़ोर तर्क दिया जाता था कि यह महाजनी सूद का मामला है, मगर अब स्पष्ट हो चुका है कि बैंकों से ऋण लेकर भी किसान आत्महत्या कर रहे हैं। सन् 2008 में संयुक्त राज्य अमेरिका के कई बड़े बैंक ब्याज आधारित पद्धति के कारण फ़ेल हो चुके हैं जिसका प्रभाव ग़रीब जनता पर पड़ा है।

3. ज़कात अनिवार्य दान

प्रत्येक सम्पन्न मुस्लिम के लिए अनिवार्य है कि वह अपनी ज़मा धन-राशि या सोना-चाँदी में से प्रतिवर्ष 2½ प्रतिशत दान करे। व्यापारिक स्टाक पर 2½ प्रतिशत, कृषि उपज पर 5 से 10 प्रतिशत तथा पशुपालन, मधुपालन, खनिज उत्पादन पर भी ज़कात देने का नियम है। यह किसके लिए है—निर्धन, अनाथ, मुहताज और ऋण-ग्रस्त आदि की सहायतार्थ। एक ओर निर्धन की मदद हो रही है तथा दूसरी ओर धनवान को अपने निर्धन भाइयों का हमदर्द बनाया जा रहा है।

ज़कात प्रचलित टैक्सों से भिन्न है। टैक्स वुसूली तो निर्धन से भी की जाती है परन्तु बड़ा भाग सरकारी कार्यों, मंत्रियों और नौकरशाहों पर ख़र्च हो जाता है। निर्धनों के कल्याण व भलाई की स्कीमें भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ जाती हैं। ईश्वरीय विधान द्वारा जो प्रणाली दी गई है वह सम्पूर्ण समाज के लिए कल्याणकारी है। ज़कात के कुछ बड़े लाभ इस प्रकार हैं—

1. असम्पन्न और वंचित वर्ग की सहायतार्थ एक प्रकार का सामाजिक बीमा (Social Insurance) है।
2. धनवान वर्ग में निर्धन के प्रति दयाभाव, सहानुभूति और इनसानी हमदर्दी की भावना उत्पन्न होती है, इससे निर्धन वर्ग ऊपर उठता है तथा धनवान व निर्धन के बीच का संघर्ष पनपने नहीं पाता।
3. आर्थिक जगत् में धन का प्रवाह बाज़ार की ओर होने से वस्तुओं और सेवाओं की माँग बढ़ती है, जिससे उत्पादन तथा रोज़गार में वृद्धि होती है। परिणामस्वरूप समाज आर्थिक ख़ुशहाली की ओर अग्रसर होता है।
4. यह टैक्स नहीं है इसलिए इसकी चोरी का रुझान भी नहीं पाया जाता। यह तो ईश-भक्ति और इबादत है, इसलिए स्वयं हिसाब लगा-लगाकर ध्यानपूर्वक भुगतान किया जाता है।

4. अन्य दान-पुण्य

ज़कात तो इस्लाम का स्तम्भ है। इसके अतिरिक्त रमज़ान मास में 'सदक़-ए-फ़ित्र' का नियम है। यह लगभग दो किलो गेहूँ (अथवा उतनी रक़म) प्रति व्यक्ति ईद की नमाज़ से पूर्व देना होता है, ताकि निर्धन भी अपनी ईद सबके साथ मना सके। कुछ पापों के प्रायश्चित के तौर पर या किसी मजबूरी में रोज़ा न रखने के दान के रूप में या क़सम तोड़ने के प्रायश्चित के रूप में यह धन ग़रीब तक पहुँचता है, इसके अतिरिक्त भी दान-पुण्य पर बहुत ज़ोर दिया गया है।

5. आय के स्रोतों पर प्रतिबन्ध

यह भी ईश्वर की दयालुता का नमूना है कि उसने अपनी सूक्ष्मदर्शिता और तत्वदर्शिता से आय व्यय की उन मदों पर प्रतिबन्ध लगा दिया जो व्यक्ति और समाज के लिए घातक हो सकते हैं। प्रतिबन्धित आय के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–

- किसी का माल उसकी स्वतन्त्र सहमति के बिना ले लेना या दबाव डालकर या उसे धोखे में रखकर लेना। किसी दूसरे का माल रिश्वत देकर हड़प कर लेना। (क़ुरआन, 2:188)
- अमानत में ख़यानत करना। (क़ुरआन, 2:283)

- चोरी डकैती। (क़ुरआन, 60:12)
- नाप-तौल में हेरा-फेरी द्वारा कमाई। (क़ुरआन, 83:1-3)
- व्यभिचार और वेश्यावृत्ति से आय। (क़ुरआन, 24:33)
- ब्याज और ब्याज पर आधारित समस्त क्रियाकलापों की आय। (क़ुरआन, 2:275)
- शराब और जुआ। (क़ुरआन, 4:90)

6. व्यय पर भी पाबन्दी

अपने कमाए धन को फ़ुज़ूल में उड़ाने से रोका गया है। (क़ुरआन, 17:27), मिथ्या प्रदर्शन को नापसन्द किया गया, साथ ही कन्जूसी करने को भी मना किया गया है। तात्पर्य यह है कि धन जो एक महत्वपूर्ण साधन है उसे सन्तुलित ढंग से ख़र्च करो। इस तरह जो संसाधन बचेंगे वे निर्धनों के उद्धार में लगाए जा सकते हैं। इस सम्बन्ध में क़ुरआन की यह शिक्षा कितनी सुन्दर है—

> "अल्लाह के नेक बन्दे वे हैं जो ख़र्च में न तो 'अति' करते हैं और न कन्जूसी, बल्कि इन दोनों के बीच 'सन्तुलन' पर रहते हैं।"
> (क़ुरआन, 25:67)

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने मर्दों को सोने के आभूषण आदि पहनने पर रोक लगाई। इसी प्रकार सोने-चाँदी के बर्तनों के प्रयोग को रोका गया। नबी (सल्ल॰) ने लड़के की शादी के अवसर पर दी जानेवाली ऐसी दावत (वलीमा) को 'बुरा' बताया जिसमें केवल धनवानों को बुलाया गया हो।

7. वंचित वर्ग पर फ़ोकस

इस्लामी आर्थिक प्रणाली पूँजीपति की विरोधी नहीं है, मगर उनकी गतिविधियों को समाजहित से नियमित और नियन्त्रित करती है। साथ ही इस का फ़ोकस सीमान्त आदमी और वंचित वर्ग (अनाथ, मुहताज, अपंग, बेसहारा, बूढ़े आदि) की बुनियादी व मूल आवश्यकताएँ पूरी करना है। धन का प्रवाह इस वर्ग की ओर भी बना रहे—

> "ऐसा न हो कि तुम्हारा धन केवल धनवानों के बीच चक्कर लगाता रहे।"
> (क़ुरआन, 59:7)

8. सामाजिक व्यवस्था

इस्लाम ने समाज का ताना-बाना इस प्रकार बुना है कि सब एक-दूसरे के सहयोगी हैं। इस सहयोग में धर्म, जाति, भाषा या क्षेत्र का अन्तर कोई मतभेद पैदा नहीं कर सकता। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के इस आदेश पर विचार करें–

"वह आदमी आस्थावान नहीं जो स्वयं रात को पेट भर खाकर सो रहे और उसका पड़ोसी भूखा रहे।"

जो लोग किसी कारण आर्थिक दौड़ में पिछड़ जाएँ उनकी मदद के लिए उनके पड़ोसी, रिश्तेदार और मित्र आगे आएँ। यदि फिर भी ज़रूरत शेष रहे तो ज़कात, दान-पुण्य और सरकारी कोष उनकी सहायता हेतु उपलब्ध हो।

9. जीविकोपार्जन और स्वरोज़गार को प्रोत्साहन

मनुष्य पर अपने जीविकोपार्जन हेतु दौड़-धूप अनिवार्य है–

"नमाज़ पूरी कर लेने के बाद आजीविका प्राप्ति हेतु धरती पर फैल जाओ।" (क़ुरआन, 62:10)

ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने व्यापार, व्यवसाय, कृषि, दस्तकारी और मज़दूरी को प्रोत्साहित किया। अकारण माँगने या ऋण लेने को हतोत्साहित किया। एक व्यक्ति ने नबी (सल्ल॰) से आर्थिक सहायता की याचना की। आपने कहा कि तुम्हारे पास जो सामान हो उसे लाओ। वह व्यक्ति कम्बल और प्याला ले आया। आपने सामान नीलाम किया और कहा आधी रक़म से घर में खाना ले जाए और आधी रक़म से कुल्हाड़ी ख़रीदे और लकड़ियाँ काटकर बाज़ार में बेचा करे। ऐतिहासिक उल्लेख में दर्ज है कि उस कुल्हाड़ी का लकड़ी का दस्ता स्वयं अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने अपने हाथ से लगाया था।

10. श्रमिकों के साथ दयालुता

दासों के बारे में जो निर्देश दिए गए हैं वह श्रमिकों पर भी लागू होंगे, क्योंकि उस समय अधिकांश श्रम दासों से कराया जाता था। इसके अतिरिक्त कुछ महत्वपूर्ण इस्लामी शिक्षाएँ प्रस्तुत हैं–

1. **श्रम सम्मान :** हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने मेहनत की कमाई को प्रोत्साहित किया तथा श्रम को सम्मान दिया। नबी (सल्ल॰) के एक अनुयायी थे सअद अनसारी, जब उन्होंने हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) से हाथ मिलाया तो आपने देखा कि उनके हाथ कठोर थे। कारण पूछा तो उन्होंने बताया कि दिन भर फावड़ा चलाता हूँ। आपने उनके हाथ चूम लिए और कहा, "यह हथेलियाँ अल्लाह को प्यारी हैं, इन्हें आग स्पर्श नहीं करेगी।"
2. दासों को भाई कहा गया, तो श्रमिक भी भाई हुए।
3. उनकी सामर्थ्य से अधिक कार्य न लिया जाए।
4. मज़दूर (श्रमिक) की मज़दूरी तथा अन्य शर्तें पहले तय की जाएँ।
5. मज़दूर की मज़दूरी उसका पसीना सूखने से पूर्व अदा कर दी जाए। अर्थात् शीघ्र दी जाए, इसमें वेतन का समय से भुगतान भी सम्मिलित है।
6. अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा कि अल्लाह फ़रमाता है, "प्रलय के दिन मैं तीन आदमियों का दुश्मन हूँगा—उसमें एक वह जिसने मज़दूर से मेहनत पूरी कराई फिर उसकी मज़दूरी नहीं दी। (हदीस : बुख़ारी)

श्रमिकों और कर्मचारियों को भी निर्देश हैं कि वे ईमानदारी से कार्य करें और मालिक को हानि न पहुँचाएँ। इस प्रकार श्रम बनाम पूँजीपति जो वर्ग-संघर्ष भड़काया जाता है इस्लाम उसकी जड़ काट देता है। हड़ताल और तालाबन्दी का इलाज सिर्फ़ यही सिद्धान्त हैं।

पशु-पक्षी, पर्यावरण भी दया के हक़दार

क़ुरआन में अंकित प्रभु के कुछ सन्देश—

- "अल्लाह ने हर जीवधारी को पानी से पैदा किया, तो उनमें से कोई अपने पेट के बल चलता है और कोई उनमें दो टाँगों पर चलता है और कोई उनमें चार (टाँगों) पर चलता है।" (क़ुरआन, 24:45)
- "और निश्चय ही तुम्हारे लिए चौपायों में भी एक शिक्षा है। उनके पेटों में जो कुछ है उसी में से एक चीज़ (अर्थात् दूध) हम तुम्हें पिलाते हैं, और तुम्हारे लिए उनमें बहुत-से दूसरे फ़ायदे हैं और उन्हें तुम खाते भी हो और उनपर और नौकाओं पर तुम सवार होते हो।" (क़ुरआन, 23:21-22)
- "और तुम्हारे लिए चौपायों में भी एक बड़ी शिक्षा-सामग्री है, जो कुछ उनके पेटों में है उसमें से गोबर और रक्त के बीच से हम तुम्हें विशुद्ध दूध पिलाते हैं।" (क़ुरआन, 16:66)
- "क्या उन्होंने अपने ऊपर पक्षियों को पंक्तिबद्ध पँख फैलाए और उन्हें समेटते नहीं देखा? उन्हें रहमान के सिवा कोई और नहीं थामे रहता।" (क़ुरआन, 67:19)
- "निस्सन्देह अल्लाह दाने और गुठली को फाड़ निकालता है।" अर्थात् बीज अंकुरित होता है। (क़ुरआन, 6:95)
- "और वही है जिसने बाग़ पैदा किए, कुछ जालियों पर चढ़ाए जाते हैं और कुछ नहीं चढ़ाए जाते, और खजूर और खेती भी जिनकी उपज अलग-अलग प्रकार की होती है, और ज़ैतून व अनार भी......।" (क़ुरआन, 6:141)
- "और अल्लाह ही ने आकाश से पानी बरसाया। फिर उसके द्वारा धरती को उसके मृत हो जाने के पश्चात् जीवित किया। निश्चय ही इसमें बड़ी निशानी है उन लोगों के लिए जो सुनते हैं।" (क़ुरआन, 16:65)
- "और खजूरों और अंगूरों के फलों से भी (हम एक चीज़ तुम्हें पिलाते हैं) जिससे तुम मादक चीज़ भी तैयार कर लेते हो और पाक रोज़ी भी।" (क़ुरआन, 16:67)

❖ "और तुम्हारे रब ने मधुमक्खी के मन में यह बात डाल दी कि 'पहाड़ों और वृक्षों में और लोगों की बनाई हुई छत्रों में घर बना। फिर हर प्रकार के फल-फूलों से खुराक ले और अपने रब के बताए हुए मार्ग पर चलती रह।' उसके पेट से विभिन्न रंग का एक पेय (मधु) निकलता है, जिसमें लोगों के लिए रोग उपचार है।" (क़ुरआंन, 16:68-69)

यहाँ क़ुरआन के कुछ चयनित अंश प्रस्तुत किए गए हैं। इसके अतिरिक्त भी इस प्रकार के अनेक अंश हैं जिन्हें अल्लाह ने निशानी के तौर पर पेश किया है। इनको पढ़कर पशु-पक्षी, वनस्पति, पानी अर्थात् कुल मिलाकर आज की भाषा में पर्यावरण जागरूकता नज़र आती है। क़ुरआन में प्रभु का कथन है– "हमने आपको (ऐ मुहम्मद सल्ल॰) सारे संसार के लिए रहमत बनाकर भेजा है" (21:107), अर्थात् संसार के समस्त प्राणियों, जीव-जन्तुओं व वनस्पति के लिए अत्यन्त दयावान बनाकर भेजा है। अतः हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) को एक महान पर्यावरणवादी के रूप में भी देखा जाता है जो कि आगे की चर्चा से भी स्पष्ट है–

पशुओं के लिए दयावान

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) पशुओं का बहुत ख़याल रखते थे। जो लोग अपने ऊँट या घोड़ों पर सवार होकर आपके पास आते थे आप उनके जानवरों को देखते थे। यदि ऐसा लगता कि उसका मालिक अपने जानवर का ध्यान नहीं रख रहा है तो उसे उचित निर्देश देते थे। पशुओं के सम्बन्ध में आपने जो दिशा-निर्देश दिए वे इस प्रकार हैं–

1. जानवर पर उसकी क्षमता से अधिक भार न लादा जाए।
2. उसकी थकान का भी ख़याल रखा जाए।
3. उसके चारे और पानी की उचित व्यवस्था हो।
4. खेल-तमाशे के लिए जानवर को न मारा जाए।
5. जंगल के पशु-पक्षियों का भी अनावश्यक शिकार न किया जाए।
6. हर प्यासे जीवधारी को पानी पिलाना पुण्य है।

इतिहास की पुस्तकों से ज्ञात होता है कि नबी (सल्ल॰) ने मदीना नगर से बाहर भूमि सुरक्षित कराई थी जिसमें जानवरों की चरागाह थी और पेड़-पौधे

भी उगते थे, इसे 'हरीम' (अर्थात् सुरक्षित क्षेत्र) कहा जाता था। यह आज के सुरक्षित वन-क्षेत्र (अभ्यारण्य) का उदाहरण है।

एक बार पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) एक व्यक्ति के बाग़ में गए। वहाँ एक ऊँट बँधा था ज़ो आपको देखकर बिलबिलाया। आपने स्नेह से उसके ऊपर हाथ फेरा और ऊँट के मालिक से कहा, "तुम इस जानवर के मामले में अल्लाह से डरते नहीं?" बेज़बान जानवरों को भूखा रखना या कष्ट देना पाप है। एक महिला के बारे में बताया गया कि उसे इसलिए अज़ाब (ईश्वरीय प्रकोप) हुआ कि उसने बिल्ली को बाँधकर रखा यहाँ तक कि वह भूख-प्यास से मर गई।

प्यास से तड़पते कुत्ते को पानी पिलाने की घटना पर पैग़म्बर (सल्ल॰) ने जन्नत की ख़ुशख़बरी दी।

पक्षियों के लिए दयाभाव

इसी प्रकार मुहम्मद (सल्ल॰) का दयाभाव पक्षियों के लिए भी अपार था। एक यात्रा में हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) और आपके साथियों ने जहाँ पड़ाव किया वहाँ चिड़िया ने अंडा दे दिया था। एक सहाबी ने वह अंडा उठा लिया। चिड़िया व्याकुल होकर पँख फड़फड़ाने लगी। आप (सल्ल॰) ने अंडे को उसी घोंसले में रखवाया।

एक बार मुहम्मद (सल्ल॰) के एक प्रिय साथी चादर में चिड़िया के बच्चे छिपाए आप (सल्ल॰) के पास आए। आप (सल्ल॰) ने देखा तो फ़रमाया, जाओ जहाँ से इन बच्चों को उठाया है वहीं रखकर आओ। आपने फ़रमाया कि फलदार पेड़ और खेती के जो फल या अनाज इनसान और पशु-पक्षी खा लेते हैं वह भी सदक़ा (दान) है। आप (सल्ल॰) ने यह भी फ़रमाया, "जो व्यक्ति एक गौरैया को भी अकारण मारेगा तो प्रलय के दिन वह अल्लाह से फ़रियाद करेगी।" (हदीस : नसई)

पेड़-पौधों के बारे में

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने पेड़-पौधे लगाने की प्रेरणा जिन शब्दों में दी है वह सुनहरे अक्षरों से लिखने योग्य है—

"अगर प्रलय सामने हो, किसी के हाथ में खजूर का पौधा बोने के

लिए हो और उसे बोने की शक्ति हो तो पौधे को लगा दे।"

ऊपर उल्लेख हो चुका है कि मुहम्मद (सल्ल॰) ने सुरक्षित वन-क्षेत्र स्थापित किया था, जो जीवधारी तथा वनस्पति दोनों के संरक्षण हेतु था। साधारणतया युद्धकाल में पेड़-पौधों की कोई चिन्ता नहीं करता, बल्कि उस समय दुश्मन की फ़सलों और बाग़ों को तबाह व बर्बाद करने का चलन आम था। ऐसे में आप (सल्ल॰) ने युद्ध के दौरान पालतू जानवरों को मारने, खेती तबाह व बर्बाद करने और पेड़ों को काटने से मना किया। (हदीस : अबू दाऊद)

इस्लामी राज्य के प्रथम ख़लीफ़ा हज़रत अबू-बक्र सिद्दीक़ (रज़ि॰) सेना को जो निर्देश देते थे, उनमें से एक यह भी था कि फलदार पेड़ों को न काटें और हरे-भरे स्थान न जलाएँ। स्पष्ट है कि आपातकालीन परिस्थिति में पेड़-पौधों के संरक्षण के प्रति इतना भाव है तो आम दिनों में कितना होगा।

पानी के बारे में

पानी क़ुदरत का अनमोल उपहार है। "क़ुरआन के अनुसार, "ईश्वर ने हर जीवित चीज़ को पानी से बनाया।" (21:30) आज जो पानी की बर्बादी हो रही है, उसकी पृष्ठभूमि में ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का सद्व्यवहार देखिए कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने अपने अनुयाइयों को नमाज़ के लिए मुँह-हाथ-पाँव धोते समय भी हिदायत की कि पानी का अपव्यय नहीं होना चाहिए, चाहे तुम बहती नदी के किनारे पर ही बैठे हो।

इस निर्देश में एक वैध कार्य के लिए भी आवश्यकता से अधिक पानी के प्रयोग से रोका गया। यहाँ एक ओर तो पानी के महत्व को बताया जा रहा है और दूसरी ओर पर्यावरण सुरक्षा का भी ध्यान है कि नदी किनारे पर भी एहतियात बरती जाए। हौज़ या तालाब के पानी को गन्दा करने से मना किया गया।

प्रदूषण के बारे में

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने पर्यावरण साफ़-सुथरा रखने पर बल दिया। आप (सल्ल॰) के मुख्य निर्देश इस प्रकार हैं—

1. स्वच्छता आधा ईमान है।
2. अपने आँगन को साफ़ रखो और यहूदियों की भाँति न हो जाओ।

3. अल्लाह पवित्र है और पवित्रता को पसन्द करता है।
4. रास्ते से कष्टदायक चीज़ों को हटाना पुण्य है।
5. रास्तों पर या छायादार पेड़ों के नीचे या पानी में पेशाब या शौच करना मना है।
6. जो कोई सामूहिक स्थलों (मार्ग, पार्क, बाज़ार आदि) में मूत्र या शौच करता है उसपर अल्लाह, फ़रिश्तों और इनसानों की ओर से लानत होती है।

विचारणीय है कि जब मूत्र और शौच के बारे में ऐसी सख़्त हिदायत है, तो इससे अधिक बड़े प्रदूषण जो गैस, रासायनिक या विषैली चीज़ों से फैलें उनपर कितनी बड़ी फटकार है।

आस्था एवं उपासना

किसी भी धर्म की प्रकृति को जानने के लिए उसकी आस्था के आधारों तथा उपासना-पद्धति की जानकारी आवश्यक है। ईश्वरीय गुणों के बारे में कुछ चर्चा विषय प्रवेश में आ चुकी है। यहाँ इस्लाम की आस्था एवं उपासना की पद्धतियों को बहुत संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

बुनियादी आस्थाएँ

इस्लाम की तीन बुनियादी (मूल) आस्थाएँ हैं जो इस प्रकार हैं–

1. एकेश्वरवाद (तौहीद)

इस्लाम की बुनियादी आस्थाओं में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है एक ईश्वर में आस्था। इनसान और सम्पूर्ण सृष्टि का रचयिता, वास्तविक स्वामी, शासक और प्रबन्धक एक अकेला 'अल्लाह' है। उसी ने यह सृष्टि बनाई और वही इसे चला रहा है। हर चीज़ को अस्तित्व में रहने के लिए जिस ऊर्जा की जितनी मात्रा में आवश्यकता है, वह अल्लाह ही उसे प्रदान कर रहा है। प्रभुसत्ता के समस्त गुण उसी में पाए जाते हैं और कोई दूसरा लेशमात्र भी उसका साझी नहीं है। वह सदैव से है और सदा रहेगा, अन्य सब कुछ नाशवान है। वह न किसी की सन्तान है और न उसकी कोई सन्तान है। वह समस्त कमज़ोरियों से पाक है। प्रत्यक्ष और परोक्ष का पूर्ण ज्ञान उसी को है। वही अकेला मनुष्य का वास्तविक उपास्य है। उसकी भक्ति, उपासना और बन्दगी में किसी और को शरीक करना न तो विवेकपूर्ण है और न ही न्यायसंगत। आज्ञापालन उसी का होना चाहिए। मार्गदर्शन उसी का स्वीकार्य हो। अपनी मनोकामना उसी के समक्ष प्रस्तुत की जाए। शुक्रगुज़ारी और कृतज्ञता का वही अधिकारी है क्योंकि उसी ने हमें अस्तित्व प्रदान किया, जीने के सभी साधन उपलब्ध कराए और अपने पैग़म्बरों (ईशदूतों) को भेजकर हमें सत्य-मार्ग देखाया।

2. ईशदूतत्व (रिसालत)

इनसानों के व्यावहारिक मार्गदर्शन के लिए ईश्वर हर युग में आवश्यकतानुसार सन्देशवाहक भेजता रहा जो ईश्वर-प्रदत्त ज्ञान की ज्योति द्वारा अपने कार्यक्षेत्र में मनुष्यों का मार्गदर्शन करते रहे और उन्हें ईश्वर का सन्देश अपनी वाणी और अपने व्यवहार से पहुँचाते रहे। समाज को भलाइयों की ओर अग्रसर करने, बुराइयों को दूर करने तथा मुक्ति-मार्ग दिखाने का कठिन कार्य करते रहे। जब मनुष्य ने सभ्यता के वैश्विक दौर में क़दम रखा तो अन्तिम ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) को एक विश्वव्यापी सन्देश के साथ भेजा गया। यह सन्देश दो रूपों में उपलब्ध है। एक ईशवाणी जो पवित्र क़ुरआन के रूप में अक्षरशः सुरक्षित है, दूसरे हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के कथन, आचरण, आदेश-निर्देश जिन्हें 'हदीस' कहा जाता है। इस्लामी आस्था के अनुसार ईश्वर के सभी सन्देष्टाओं पर ईमान रखना ज़रूरी है, परन्तु व्यावहारिक मार्गदर्शन के लिए हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का अनुसरण करना होगा, क्योंकि उनकी शिक्षा ही ईश्वरीय विधान का अन्तिम संस्करण है।

डॉ॰ वेद प्रकाश उपाध्याय तथा अनेक विद्वानों के अनुसार सनातन धर्म की प्रतिष्ठित पुस्तकों, वेदों तथा पुराणों में जिन 'नराशंस ऋषि' 'मामहे ऋषि' 'महामद' और अन्तिम अवतार 'कल्कि अवतार' की भविष्यवाणियाँ बड़े स्पष्ट शब्दों में उल्लिखित है, वह हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ही हैं। इससे स्पष्ट है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) भारत के लिए भी पूर्ण रूप से प्रासंगिक हैं।

3. परलोकवाद (आख़िरत)

आस्था का तीसरा बिन्दु है आख़िरत पर ईमान। संसार में मनुष्य अनुत्तरदाई बनाकर नहीं छोड़ दिया गया है। वह ईश्वर के सामने जवाबदेह है। वर्तमान सांसारिक जीवन के अतिरिक्त पारलौकिक जीवन भी है। एक समय आएगा जब ईश्वर इस सृष्टि को मिटा देगा, अर्थात् 'प्रलय' या क़ियामत आएगी। फिर सभी अगले-पिछले लोगों को जीवित किया जाएगा। यह फ़ैसले व न्याय का दिन होगा और अल्लाह की अदालत क़ायम होगी, जिसमें सब लोगों के सांसारिक क्रियाकलापों और उनकी गतिविधियों का पूरा-पूरा रिकार्ड सुबूतों और गवाहों सहित पेश होगा। इस अदालत में रिश्वत, सिफ़ारिश और सांसारिक रुतबे को कोई स्थान नहीं होगा। ईश्वर प्रत्येक व्यक्ति के अच्छे और

बुरे कर्मों का हिसाब-किताब करेगा। निर्णय इस बात पर होगा कि मनुष्य ने ईश्वर-प्रदत्त आदेशों को मानकर उसके पैग़म्बर की पैरवी करके जीवन-यापन किया अथवा अपनी इच्छानुसार मनमाने ढंग से कार्य किए। जिनके अच्छे कर्म अधिक होंगे उन्हें सफल घोषित किया जाएगा और स्वर्ग का आनन्द उन्हें प्राप्त होगा, जहाँ वे सदैव रहेंगे। जिनके कर्म में अवज्ञा, उद्दंडता और अत्याचार अधिक होंगे वे दंड के अधिकारी होंगे और नरक की यातना सहेंगे।

मनुष्य के अन्तःकरण की माँग है कि ऐसी कोई व्यवस्था, कोई प्रक्रिया हो जहाँ निष्पक्ष रूप से न्याय हो। दुराचारियों और अत्याचारियों को, जो अपनी ताक़त के घमण्ड में कमज़ोरों व निर्बलों पर अत्याचार करते रहे, लोगों को सत्य मार्ग से रोकते रहे, धरती पर उपद्रव फैलाते रहे, उन्हें सार्वजनिक रूप से दण्ड दिया जाए। जो लोग कष्ट झेलकर भी सत्य मार्ग पर डटे रहे, अत्याचारियों से लोहा लेते रहे, अपनी जान और अपने माल से दीन-दुखियों की मदद करते रहे, समाज में अच्छाइयों को बढ़ावा देने तथा बुराइयों को मिटाने के कार्य में लगे रहे उन्हें सार्वजनिक रूप से इसका पुरस्कार मिलना चाहिए। परलोक की अवधारणा इसी स्वाभाविक माँग का जवाब है।

आस्था के इन तीनों बिन्दुओं पर गहनता से विचार करने से ज्ञात होता है कि ये मनुष्य की प्रकृति और उसके मनोविज्ञान के अनुकूल हैं। इनसान ईश्वर की सर्वोच्च कृति है, उसका स्वाभाविक कर्तव्य है कि वह सिर्फ़ और सिर्फ़ उसी के आगे नतमस्तक हो, उसी के प्रति समर्पित हो, उसी का आज्ञापालन करे। एक ईश्वर में विश्वास के हटते ही इनसान उस ऊँचे स्थान से गिर जाता है, या तो वह अपने जैसे की दासता स्वीकारता है या अपने से तुच्छ की, दोनों अवस्थाएँ उसकी गरिमा के प्रतिकूल हैं।

एकेश्वरवाद पर ईमान के तक़ाज़े क्या हैं? ईश्वर की दासता कैसे निभाई जाए? यहाँ से सन्देशवाहक का अनुभाग प्रारम्भ होता है। यह ईश्वर की अपने भक्तों और दासों के प्रति असीम दयालुता है कि उसने इनसान को अधिक परिश्रम और परीक्षा में नहीं डाला और पैग़म्बरों के माध्यम से संमार्ग बता दिया।

फिर परलोक की अवधारणा को देखिए जिसकी अनुपस्थिति में दया और कृपा का कोई अर्थ नहीं रह जाता। अच्छे कर्म पर इनाम मिलना ही चाहिए

और उद्दण्ड और दुष्ट के लिए भरपूर दण्ड का प्रावधान होना ही चाहिए, यही स्वर्ग और नरक की अवधारणा है।

आशय यह है कि आस्था और विश्वास के ये तीनों अंग बड़े स्वाभाविक और इनसान के मन की पुकार हैं। क़ुरआन और हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के कथनों में भिन्न-भिन्न शैलियों में इसको दिल में उतारा गया है। बहुदेववाद और शिर्क का असत्य होना तथा ज़ुल्म होना साबित किया गया है।

इबादत या उपासना

अब इबादत या उपासना को लीजिए। इस्लाम, इबादत को पूजा-अर्चना या कर्म-काण्ड तक सीमित नहीं मानता। उसके अनुसार प्रत्येक कार्य चाहे सांसारिक हो या आध्यात्मिक, जो ईश्वर के आदेशों का अनुसरण करते हुए किया जाए, इबादत में गिना जाता है। घर-परिवार चलाना, कारोबार करना, सामाजिक क्रियाकलाप यदि ईश्वर के बताए हुए तरीक़े से हो तो इबादत ही हैं। मुसलमान वास्तव में चौबीस घण्टे का दास और उपासक है। इसी तैयारी और याददिहानी के लिए चार अनिवार्य उपासनाएँ निर्धारित की गईं जो इस्लाम के स्तम्भ कहे जाते हैं।

नमाज़

नमाज़ ईश-भक्ति की सर्वश्रेष्ठ विधि है, जिसमें स्तुति, उपासना, वन्दना, अराधना, स्मरण, चिन्तन, प्रार्थना और याचना सब कुछ है। इस्लाम में आस्था रखनेवाले प्रत्येक व्यक्ति पर दिन-रात में पाँच बार नमाज़ पढ़ना फ़र्ज़ है। इसका मूल उद्देश्य है कि मनुष्य अपने मालिक के एहसान को प्रकट करने के लिए उसके समक्ष शारीरिक और आत्मिक रूप से उपस्थित हो, उसका गुणगान करे, उसके आगे नतमस्तक हो, उसके आदेशों-निर्देशों पर जो नमाज़ में पढ़े जाते हैं ध्यान केन्द्रित करे। इसके द्वारा उसमें कर्तव्य-बोध का गुण पैदा होता है तथा ईश्वरीय आदेशों की पुनरावृत्ति चरित्र-निर्माण में सहायक होती है। सामूहिक रूप से मस्जिद में नमाज़ पढ़ने पर सामाजिक समरसता और भाईचारा पैदा होता है। अमीर-ग़रीब, छोटे-बड़े, अधिकारी-कर्मचारी सब कन्धे से कन्धा मिलाकर नमाज़ पढ़ते हैं, इससे ऊँच-नीच के सभी भाव मिट जाते हैं। नैतिकता के पाठ के साथ-साथ नमाज़ के द्वारा स्वास्थ्य सम्बन्धी लाभ भी प्राप्त होते हैं।

ज़कात (अनिवार्य दान)

ज़कात, समाज के आर्थिक रूप से पिछड़े व्यक्तियों की सहायतार्थ अनिवार्य दान है। यह दान प्रत्येक धनी मुस्लिम को अपने जमा धन में से ढाई प्रतिशत देना होता है। इस्लाम इसे भीख या टैक्स के रूप में नहीं बल्कि सम्पन्न के माल में ग़रीब और वंचित के हक़ के रूप में देखता है। आर्थिक दौड़ में जो लोग किसी कारणवश पिछड़ जाएँ या किसी आपदा का शिकार हो जाएँ या कमानेवाला चल बसे और पीछे विधवा और अनाथ असहाय रह जाएँ तो उनकी मूल आवश्यकता-पूर्ति का यह एक सामाजिक बीमा है। इसका दूसरा बड़ा लाभ यह है कि ईश्वर की प्रसन्नता के लिए अपनी कमाई में से इस व्यय द्वारा मनुष्य में बलिदान और त्याग का गुण पैदा होता है। तंगदिली और धनलोलुपता दूर होती है, दीन-दुखियों के प्रति हमदर्दी पैदा होती है।

इस्लाम में यह एक इबादत है मगर आर्थिक जगत् के लिए ऑक्सीजन स्वरूप है। इसके माध्यम से बाज़ार में धन का प्रवाह होता है। असम्पन्न के हाथ में जो धन पहुँचता है उससे बाज़ार में वस्तुओं और सेवाओं की माँग उत्पन्न होती है, जिससे उत्पादन तथा रोज़गार में वृद्धि होती है और समाज आर्थिक ख़ुशहाली की ओर अग्रसर होता है। प्रतिवर्ष मालदार के धन से कम से कम ढाई प्रतिशत भाग का प्रवाह जब ग़रीब की ओर होता है तो अमीर-ग़रीब के बीच का अन्तर या आर्थिक असमानता धीरे-धीरे घटने लगती है। याद रहे कि धन का असमान वितरण वर्तमान युग की आर्थिक समस्याओं में बहुत बड़ी समस्या मानी जाती है।

रोज़ा

मनुष्य को संयमी और सदाचारी बनाने के उद्देश्य से प्रत्येक वर्ष इस्लामी कैलेन्डर के रमज़ान मास के पूरे एक महीने के रोज़े अनिवार्य किए गए हैं। इसमें पौ फटने से लेकर सूर्यास्त तक खान-पान तथा सहवास वर्जित है। बुराइयों से बचने की हिदायत है। नेकी के कामों पर उभारा गया है। कितनी ही भूख-प्यास लगी हो, आदमी कुछ खाए-पिएगा नहीं। अकेले में भी नहीं, क्योंकि रोज़ेदार को एहसास है कि अल्लाह से कुछ छिपा नहीं है। उसके सर्वव्यापी होने और उसकी अदालत पर ईमान है, रसूल का आज्ञापालन है, धैर्य और संकटों के मुक़ाबले का अभ्यास है। ईश्वर की प्रसन्नता के लिए मन की

इच्छाओं को दबाने की शक्ति है। रोज़ा इनसान को भूख के कष्ट का अनुभव कराता है, जिससे उसमें भूखों के प्रति हमदर्दी का भाव पैदा होता है। सारे विश्व में एक ही महीने में रोज़े अनिवार्य होने के कारण सामाजिक एकता पैदा होती है। स्वास्थ्य की दृष्टि से रोज़े के अनगिनत लाभ भी रोज़ेदार प्राप्त करता है। रमज़ान मास के रोज़े वास्तव में एक ऐसा रेफ़्रेशर कोर्स या प्रशिक्षण है जो व्यक्ति को हर वर्ष संमार्ग पर डटे रहने की नई ऊर्जा प्रदान करता है, उसे और अधिक आस्थावान, संयमी तथा चरित्रवान बनाता है।

हज

चौथी अनिवार्य चीज़ हज-यात्रा है। जीवन भर में केवल एक बार इसका पालन आवश्यक है और वह भी उनके लिए जो मक्का तक आने-जाने का ख़र्च वहन कर सकते हों। जहाँ अब मक्का बसा हुआ है वहाँ अब से हज़ारों वर्ष पहले हज़रत इब्राहीम (अलैहि॰) ने एक छोटा-सा घर अल्लाह की इबादत के लिए बनाया था, जिसे अल्लाह ने इस्लाम का केन्द्र बना दिया। नमाज़ के लिए उसी की ओर मुँह करने और सामर्थ्य होने पर उसका दर्शन तथा परिक्रमा करने का आदेश दिया। यह भी आदेश दिया कि इस घर की ओर आओ तो मन को शुद्ध करके आओ, वासनाओं को रोको, रक्तपात, दुष्कर्म और कटुवचन से बचो।

इस्लामी कलैन्डर के ज़िल-हिज्जा मास में पूरी दुनिया के मुसलमान हज के लिए इकट्ठे होते हैं। सब एक ही लिबास में, दो सफ़ेद चादरें ओढ़े एकेश्वरवाद के केन्द्र की ओर खिंचे चले आते हैं। अब न कोई गोरा है, न काला, न राजा न प्रजा, न अमेरिकी न अफ़्रीक़ी, सब एक समान हैं। वैश्विक भाईचारे का इससे बढ़कर कोई उदाहरण नहीं। यहाँ आकर उसके ईमान में ताज़गी आती है। इस्लाम का इतिहास उसकी आँखों के सामने आ जाता है। यहीं से इस्लाम के अन्तिम पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने अपना मिशन शुरू किया था। विरोधियों ने इसी नगर से उन्हें हिजरत करने पर विवश किया था। फिर एक दशक में ही वह विजयी होकर इस नगर में पधारे तो इतिहास हैरान है कि सारे विरोधियों के लिए आम माफ़ी की घोषणा कर दी गई! ये सारी चीज़ें मानो आदमी अपने सामने देखता है, जिसका गहरा भाव लेकर वापस आता है।

इस्लामी शिक्षाओं के स्रोत या साधन

इस्लामी शिक्षाओं, आदेशों, निर्देशों, आचारसंहिता तथा क़ानून के दो प्रमुख स्रोत हैं—एक दिव्य क़ुरआन, दूसरे हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) द्वारा इनकी व्याख्या तथा व्यावहारिक क्रियान्वयन। इस स्तर पर उचित होगा कि क़ुरआन तथा हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत कर दिया जाए।

(1) क़ुरआन मानवता के लिए वरदान

इस्लामी शिक्षाओं का मूल स्रोत पवित्र क़ुरआन है, जो हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) पर थोड़ा-थोड़ा करके 23 वर्ष में अवतरित किया गया और अपनी मूल भाषा में अक्षरशः सुरक्षित है। उसके अवतरण के समय से ही हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने उसे लिखवाना शुरू कर दिया था। आपके बाद पहले ख़लीफ़ा (शासक) हज़रत अबू-बक्र सिद्दीक़ (रज़ि॰) ने ग्रन्थ के रूप में प्रामाणिक प्रति तैयार कराकर सुरक्षित रखवा दी, फिर तीसरे ख़लीफ़ा हज़रत उसमान (रज़ि॰) ने उसकी प्रतिलिपियाँ इस्लामी जगत् के सभी केन्द्रों को भेज दीं। उनमें से दो प्रतियाँ आज भी दुनिया में मौजूद हैं—एक ताशकन्द की लाइब्रेरी में और दूसरी इस्तम्बोल (तुर्की) के म्यूज़ियम में। इसके अलावा अनगिनत मुसलमान प्रारम्भिक काल से आज तक क़ुरआन को अक्षरशः ज़बानी याद करते हैं। प्रतिदिन नमाज़ में पढ़ने के अतिरिक्त रमज़ान के महीने में हर मस्जिद में पूरा क़ुरआन सुनाया जाता है। इस प्रकार लिखित व ज़बानी दोनों तरीक़ों से क़ुरआन की सुरक्षा का पूर्ण प्रबन्ध अल्लाह ने किया है। क़ुरआन अरबी भाषा में है जो जनसामान्य में प्रचलित है। दुनिया के करोड़ों लोग उसे समझते हैं। डेढ़ हज़ार साल से उसके व्याकरण व शब्द रचना में बदलाव नहीं आया। इसलिए उसके अर्थ और अभिप्राय को समझने में कोई कठिनाई नहीं है।

क़ुरआन की वर्णनशैली अद्भुत है, जिसे पढ़ते हुए दिल कह उठता है कि यह किसी इनसान की वाणी नहीं है। क़ुरआन का चमत्कार है कि मानवजीवन के प्रत्येक विषय पर विवेचना करते हुए भी उसमें कहीं कोई टकराव या विरोधाभास नहीं। पिछले डेढ़ हज़ार वर्षों में कितना कुछ बदल गया मगर उसके नियम व सिद्धान्त कभी ग़लत साबित नहीं हुए। अरब के रेगिस्तानी नागरिकों से लेकर बाद के अफ़्रीक़ी, एशियाई और यूरोपीय देशों और आज के प्रगतिशील समाज के मार्गदर्शन में क़ुरआनी सिद्धान्त कभी पीछे नहीं रहे।

हमें विश्वास है कि विश्व की वर्तमान जटिल समस्याओं का समाधान भी क़ुरआनी मार्गदर्शन से ही सम्भव है। क़ुरआन वास्तव में ईश्वर की ओर से मानवजाति के लिए सर्वश्रेष्ठ उपहार है। यह किसी देश या जाति की सम्पत्ति नहीं, यह मानवता की साझी धरोहर है।

(2) हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) विश्वनायक

जादू वह जो सर चढ़कर बोले। एक प्रतिष्ठित लेखक और विद्वान माइकल एच॰ हार्ट (Michael H. Hart) जब निष्पक्ष होकर ग़ौर करता है तो ईसाई होने के बावुजूद अपनी पुस्तक 'The 100' में दुनिया की सौ प्रभावशाली हस्तियों में हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) को पहले नम्बर पर रखता है और पूरी ईमानदारी से स्वीकार करता है कि–

"He was the only man in history who was supremely successful on both religious and secular levels."

"इतिहास में वे (हज़रत मुहम्मद सल्ल॰) एकमात्र व्यक्ति थे, जो धार्मिक और सांसारिक दोनों स्तरों पर सबसे अधिक सफल रहे।"

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का जीवनकाल इतिहास युग का है। उस समय इतिहास लिखने का चलन था, मुस्लिम भी लिख रहे थे और दूसरे समुदायों के लोग भी लिख रहे थे। उनका जीवन, मिशन और कारनामे सबके सामने आज भी मौजूद हैं। ख़ुद मुसलमानों ने उनकी जीवनशैली, उपदेश, कथन, भाषण, क्रियाकलाप, आश्चर्यजनक प्रामाणिकता से रिकार्ड किए हैं, जिसका कोई दूसरा उदाहरण कहीं और नहीं मिलता। मुहम्मद (सल्ल॰) का सम्पूर्ण जीवन मानवता के हितार्थ समर्पित है। अरब के बिगड़े लोगों के बीच, जो केवल मारना और मरना जानते थे, मूर्तिपूजक थे, अपने पूर्वजों हज़रत इब्राहीम (अलैहि॰) और हज़रत इसमाईल (अलैहि॰) का एकेश्वरवाद भुला बैठे थे, यहाँ तक कि अपनी बेटियों को जीवित गाड़ देते थे, आपने जो क्रान्ति रची उससे पूरी दुनिया चकित है। उस दौर में अरब के उम्मी (निरक्षर) हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने ईश्वरीय आदेश पाकर समाज में ज़बरदस्त संघर्ष आरम्भ किया और दो दशकों में सब कुछ बदलकर रख दिया। हाँ, कष्टों की चरम सीमा सहन की, पत्थरों से स्वागत हुआ। पूरे ख़ानदान को तीन वर्ष सामाजिक बहिष्कार के कारण मक्का की घाटी में नज़रबन्दी झेलनी पड़ी, जहाँ कभी-कभी रोटी के

बजाय पेड़ के पत्ते खाने की नौबत आई, यहाँ तक कि अपना देश त्याग कर मदीना हिजरत करनी पड़ी। विरोधी वहाँ भी लड़ने पहुँच गए। अनुयायी आ रहे थे, क़ाफ़िला बढ़ रहा था, विरोध भी बढ़ रहा था। रहमते-आलम (सल्ल॰) को सत्य स्थापना के लिए युद्ध भी करने पड़े। एक समय आया कि उसी मक्का नगर में विजय पताका के साथ दाख़िल हुए। दुनिया आपके और आपके साथियों के रवैये पर हैरान थी कि इस विजय में न रक्तपात था, न बदले की भावना। कट्टर विरोधी भी हथियार डालकर सर झुकाए खड़े थे, और विजयी सेना के कमान्डर का एलान था कि आज सबको माफ़ कर दिया गया। यह था वह आचरण जिसने सब कुछ बदल डाला। दुश्मन, दोस्त ही नहीं बल्कि अनुयायी बन गए। यही लोग जब उस क्रान्तिकारी सन्देश को लेकर अरब भू-भाग से बाहर निकले तो सत्तासीन तानाशाहों ने मोर्चा सम्भाल लिया, मगर ज़नता की हमदर्दी उनके साथ थी; क्योंकि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का पैग़ाम दबे-कुचलों का हिमायती था। उनके यहाँ काले-गोरे, अरब-ग़ैरअरब, अमीर-ग़रीब, आक़ा-गुलाम, सब बराबर थे। वह इनसानों को इनसानी दासता से मुक्त कराकर सिर्फ़ एक अकेले अल्लाह की दासता में लाना चाहते थे। कितना सीधा-सादा मगर क्रान्तिकारी आह्वान था यह। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने रोम (रूम) के सम्राट को पत्र भेजकर इस्लाम का न्योता दिया, ईरान के शक्तिशाली मगर घमण्डी बादशाह के पास अपने दूत के हाथ पत्र भेजा। विश्व के अन्य सभी सत्तासीन लोगों को चेताया और इतिहास साक्षी है कि अन्ततः हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की बात ही सही प्रमाणित हुई।

फिर उस क्रान्ति को देखिए जो हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के मिशन से फैली। अमन-चैन का वातावरण, ऊँच-नीच, छूतछात, भेदभाव का अन्त, बेटी के पैदा होने पर ख़ुशी क्योंकि उसके पालन-पोषण पर स्वर्ग की ख़ुशख़बरी, नारी का सम्मान कि माँ के क़दमों में स्वर्ग है, शादी के समय लड़की की सहमति का नियम और महर के रूप में लड़की के लिए रक़म का प्रावधान, पति, पिता और पुत्र तीनों की सम्पत्ति में विरासत में हिस्सेदारी। धीरे-धीरे गुलामों को आज़ाद कराने की अनूठी प्रक्रिया लागू करना। शासन चलाने के लिए इस्लामी लोकतंत्र जिसमें ख़लीफ़ा (शासक) का चयन जनता की आम सहमति (बैअत प्रक्रिया) द्वारा किया जाना। आर्थिक क्षेत्र में ब्याज पर पूर्ण

प्रतिबन्ध तथा मालदारों से अनिवार्य ज़कात द्वारा समाज की ग़रीबी दूर करना। जमाख़ोरी, मुनाफ़ाख़ोरी, मिलावट आदि आर्थिक अपराधों की रोकथाम। शराब, जुआ, सट्टा वर्जित। चोरी, डकैती, जालसाज़ी, नाप-तौल में हेराफेरी पर दण्ड। वेश्यावृत्ति तथा अवैध सम्बन्धों की मनाही तथा कठोर सज़ा का प्रावधान। सुदृढ़, शीघ्र और बेलाग न्याय व्यवस्था। इन बिन्दुओं पर विचार कीजिए, क्या यह आदर्श समाज के निर्माण का रास्ता नहीं है? और क्या हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के अतिरिक्त कोई विश्वनायक दिखाई पड़ता है?

धार्मिक विशेषाधिकार नहीं

इस्लामी व्यवस्था की मानवजाति पर यह भी कृपा है कि यहाँ किसी जाति या वर्ग का विशेषाधिकार नहीं। पादरियों, पण्डितों, पुरोहितों का कोई कार्य नहीं। धार्मिक कार्यों के लिए कोई भी आगे आ सकता है, जो ज्ञानवान और सदाचारी हो। नमाज़ की अगुवाई (इमामत), निकाह पढ़ाना, अन्य धार्मिक कार्यों को सम्पन्न करने या कराने पर किसी का एकाधिकार नहीं। हाँ, समाज में धर्मशास्त्र के जाननेवाले उलमा (ज्ञानी) का अस्तित्व और आदर-सम्मान है, मगर वह इस कारण कि ये लोग विषय विशेषज्ञ हैं। इनकी वही बातें मान्य होंगी जो क़ुरआन, हदीस और इस्लामी शरीअत के अनुकूल होंगी।

इस अवसर पर यह जानना भी उचित होगा कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने ज़कात और दानपुण्य का स्वयं कभी भी उपयोग नहीं किया और अपनी भावी पीढ़ियों के लिए भी इसे वर्जित रखा।

अध्याय-8

निष्कर्ष

अब तक के विवेचन द्वारा यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि इस्लाम धर्म मनुष्य के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में दयालुता का पक्षधर है। यह ऐसी सच्चाई है जिसका इनकार नहीं किया जा सकता।

'इस्लाम' के शाब्दिक अर्थ से शान्ति और सलामती का आभास मिलता है। अल्लाह के सौ से अधिक गुणवाचक नामों में रहमान और रहीम सबसे अधिक और सबसे ऊपर हैं। अन्तिम ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) बहुत बड़ी हस्ती हैं और आपकी उपाधि 'रहमते-आलम' (सृष्टि के लिए दयालुता) सबसे प्रमुख है। क़ुरआन स्वयं को मार्गदर्शक तथा दयालुता के रूप में प्रस्तुत करता है। उसकी शिक्षाएँ दया, करुणा, हमदर्दी, न्याय और सत्यवचन सिखाती हैं। हाँ, युद्ध का उल्लेख भी है जिसका पूर्ण औचित्य है। कोई भी विश्वव्यापी अभियान जो इनसानियत को क्रूर तानाशाहों और अत्याचारी सामन्तों के चंगुल से मुक्त कराने का संकल्प लेकर उठे उसे इन मानवरूपी राक्षसों से अपनी रक्षा के लिए तथा उनको उपद्रव से रोकने के लिए प्रबन्ध करना ही पड़ता है।

इस्लाम ने परिवार की जो रूप-रेखा प्रस्तुत की है उसमें स्वर्ग तो घर में उतर आता है। पति-पत्नी एक-दूसरे पर जान छिड़क रहे हैं, अपनी सन्तान की रक्षा, सुरक्षा, शिक्षा-दीक्षा और पालन-पोषण पूर्ण तन्मयता और स्नेह से कर रहे हैं। बच्चे भी आज्ञाकारी और संस्कारी हैं। घर के बड़े-बूढ़े घर की शोभा हैं, हर एक उनकी सेवा करके प्रसन्न हो रहा है। वह अपने बच्चों को आशीर्वाद दें रहे हैं। क्या पश्चिमी सभ्यता इसका कोई मुक़ाबला कर सकती है?

सामाजिक व्यवस्था में नैतिक मूल्य मूल्यवान हैं, जहाँ पड़ोसी सगे के समान है, हमदर्दी और भाईचारा व्याप्त है, जहाँ ग़लती हो तो सकती है मगर क्षमा-याचना तथा क्षमादान का चलन है, यहाँ दबे-कुचले, अनाथ और सेवक दयाभाव के हक़दार हैं, यहाँ कन्या को अधिक अधिकार प्राप्त हैं। हाँ, गन्दी सोच और बुरी नज़रवालों से कड़ाई से निबटने का भी प्रबन्ध है।

राजनैतिक व्यवस्था आम सहमति से बनती हैं और आम मश्विरे से चलती है, जिसमें अच्छाइयाँ फलती-फूलती हैं और बुराइयाँ दबती हैं। दयाभाव सर्वोपरि रहता है, इसके लिए न्यायशीलता, निष्पक्षता और मानवाधिकारों का संरक्षण सुनिश्चित करना ही इस्लाम की विशेषता है।

अर्थव्यवस्था को पूंजीपतियों के आगे घुटने टेकने न देना ही वास्तविक दयालुता है। हाँ, पूँजी जुटानेवालों का अहित भी नहीं होना चाहिए। ग़रीब, मज़दूर, किसान और आम उपभोक्ता पर ध्यान केन्द्रित रहे। व्यापार, व्यवसाय और उद्योग फले-फूले, मगर परजीवी बनकर सूदी कारोबार को अनुमति नहीं। सम्पन्न अपनी बचत में से 'ज़कात' द्वारा दान-पुण्य ग़रीब और वंचित तक पहुँचाए। जुआ, सट्टा, लॉटरी, नशा, शराब, वेश्यावृत्ति, जमाख़ोरी, मिलावट सब इनसानियत विरोधी हैं इसलिए इस्लाम में इनकी पूर्ण मनाही है।

इस्लाम इस बात पर बल देता है कि आदमी के विचार, उसके विश्वास और आचरण सही हों। ईश्वर में विश्वास, परलोक में जवाबदेही उसे निर्दयी और स्वार्थी होने से बचाता है। वह दूसरे इनसानों बल्कि पशु, पक्षी और पर्यावरण हर एक के लिए दयाभाव रखेगा।

आचारसंहिता हेतु 'क़ुरआन' अनुपम है, व्यावहारिक आदर्श के लिए हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का आचरण 'नमूना' है। चरित्र निर्माण के लिए ये दोनों स्रोत मानव के लिए अनमोल उपहार हैं।

निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि निस्सन्देह इस्लाम दयालुतापूर्ण ईश्वरीय धर्म है। इस्लामी सिद्धान्तों एवं शिक्षाओं का अध्ययन करके पाठकगण स्वयं निर्णय ले सकते हैं कि ये शिक्षाएँ व्यावहारिक एवं क्रान्तिकारी होने के साथ-साथ दया, कृपा, करुणा, हमदर्दी, सहानुभूति को बढ़ावा देने में पूर्ण सक्षम हैं। इसी दयाभाव का विस्तृत रूप है परलोक की सफलता। हमारा विश्वास है कि यही दयालुतापूर्ण धर्म मनुष्य के पारलौकिक जीवन की सफलता का मार्ग है, जिसका अनुसरण करके वह स्वर्ग की नेमतें प्राप्त कर सकता है और नरक की घोर यातना से बच सकता है।